चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र
SEP.
6

Chandamama, September '50

Photo by N. Ramakrishna

मेरी सखी
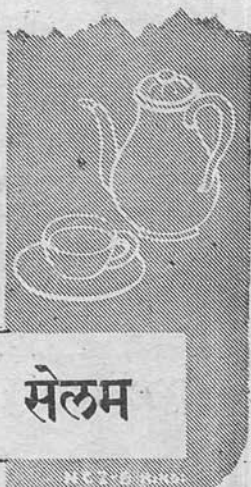
चन्दामामा
विषयसूची

वीर बालक ... 6
दुष्ट ग्रह ... 8
नागवती ... 13
वालि और दुंदुभी 21
जीवन का अर्थ ... 24
साले की बाड़ी और
बहनोई की भैंसें ... 29
मृगशिरा का जन्म ... 35
बाल-हृदय ... 39
बच्चों की देख-भाल ... 46
भानुमती की पिटारी ... 48

इनके अलावा मन बहलाने वाली पहेलियाँ, सुन्दर रँगीले चित्र और भी अनेक प्रकार की विशेषताएँ हैं।

चन्दामामा कार्यालय
पोस्ट बाक्स नं० १६८६
मद्रास-१

ग्राहकों को एक सूचना

चन्दामामा हर महीने पहली तारीख के पहले ही डाक में भेज दिया जाता है। इसलिए जिनको चन्दामामा न पहुँचा हो वे तुरंत डाक घर में पूछताछ करें और फिर हमें सूचित करें। १०-वीं तारीख के बाद हमें पहुँचने वाली शिकायतों पर कोई ध्यान न दिया जाएगा। कुछ लोग तीन-तीन महीने बाद हमें लिखते हैं। पत्र-व्यवहार में ग्राहक-संख्या का अवश्य उल्लेख करें।

व्यवस्थापक : 'चन्दामामा' :: पो. बा. नं. १६८६ :: मद्रास-१

चन्दामामा

माँ - बच्चों का मासिक पत्र
संचालक : चक्रपाणी

पिछले महीने हमने बताया था कि कंस के अत्याचारों से तङ्ग आकर गोकुल के सब लोग बृन्दावन चले गए।
बृन्दावन बहुत ही सुन्दर जगह थी। जहाँ देखो, हरियाली छाई हुई; गोवर्धन जैसे ऊँचे नीले पहाड़ और कल-कल नाद करके बहते हुए झरने। वह दृश्य देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता था। उस बृन्दावन में कृष्ण तमाल-वृक्ष की डाल पर बैठ कर बाँसुरी बजाया करते। उनकी बाँसुरी की तान सुनने के लिए लोग चारों तरफ से आकर इकट्ठा हो जाते। उनके कानों में अमृत बरसने लगता और वे तन-मन की सुध भूल जाते। अबोध पशु-पक्षी भी कन्हैया की बाँसुरी से मुग्ध हो जाते। मोर आनन्द से नाचने लगते और काले नाग भी फन फैला कर झूमने लगते। चाँदनी रातों में कन्हैया यमुना किनारे बाँसुरी बजाते हुए गोप-गोपिकाओं के साथ रास रचाते। वह दृश्य देखने के लिए स्वर्ग के देवता-गण भी विमानों पर चढ़ कर आसमान में मँड़राने लगते और आनन्द से पुलकित होकर फूल बरसाते। इस तरह भगवान कृष्ण की मनो-मोहक क्रीडाओं से बृन्दावन का एक एक रज-कण पवित्र और अमूल्य हो गया।

अङ्क 1—वर्ष 2
सितम्बर 1950

एक प्रति 0-6-0
वार्षिक 4-8-0

वीर बालक

एक था कप्तान, उसके
एक ही लड़का सलोना–
जो पिता के प्रेम का था
बन रहा जीता खिलौना।
वह सदा अपने पिता के
साथ रह कर सफर करता।
हो बिलग उससे पिता भी
एक पग आगे न धरता।
एक बार जहाज में लग
गई आग किसी वजह से।
त्राहि! त्राहि! मची, मुसाफिर
थे निराश सभी तरह से।
हो गया कप्तान व्याकुल,
क्या करे, तय कर न पाया।
किन्तु इतने में उधर ही
एक और जहाज आया।
तब बुला कप्तान ने निज
पुत्र को उससे कहा यह–
'दूँ हुकुम जब तक न तुझको
तू यहीं पतवार धर रह!'
चल दिया कप्तान अपने
यात्रियों सब को बचाने।
इधर बढ़ती विकट लपटें
चलीं बालक को डराने।

‘ वैरागी ’

लग गया कप्तान अपने
काम में सब कुछ भुला कर।
इधर लपटों से चतुर्दिक
वीर वह बालक गया घिर।
पैर जलने लगे उसके
शीघ्र तपती तख्तियों पर।
मगर वह अपनी जगह से
हुआ टस-से-मस न, डर कर।
पिता लौटे नहीं तब भी
उठीं हहर कराल लपटें।
चोट खाकर साँप काले
काटने ज्यों घेर झपटें।
अधर सूखे, बदन झुलसा,
बही दृग से अश्रु - धारा।
‘क्यों पिता! कब तक रहूँ मैं
यहाँ?’ बालक ने पुकारा।
पर वहाँ दे कौन उत्तर?
धधक भीषण प्रलय - ज्वाला
रँग गईं सारी दिशाएँ;
रुधिर सा फैला उजाला।
वीर बालक हुआ बलि कर
अंत तक कर्तव्य - पालन।
रही दीक्षा अचल उसकी
झुलस यदपि गया मृदुल तन।
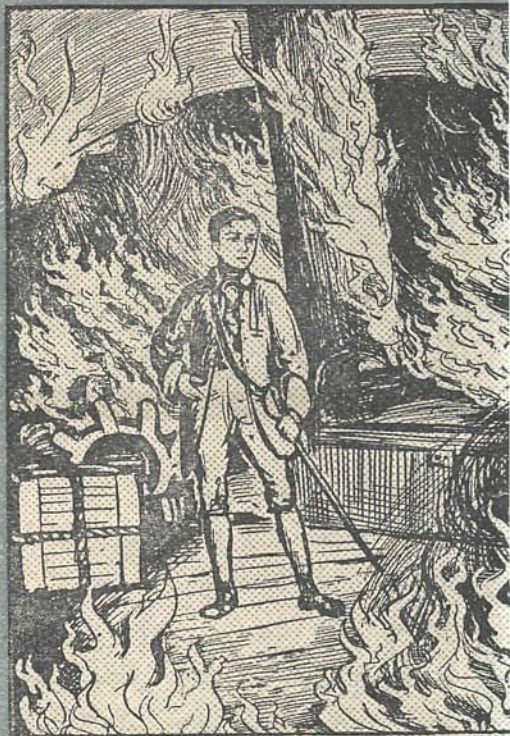
किसी समय जगन्माता सारे संसार की रक्षा करके सब लोगों को मुसीबतों से बचा सकती थी। उस समय सब तरह के ग्रह, पंच-भूत, और भी संसार के जितने तत्त्व हैं सब उसका कहना मानते और किसी को कोई कष्ट न देते। अगर संसार में पानी की कमी होती तो वह सूरज को रोक लेती और बादलों को मनमाना बरसने का हुक्म देती। पानी बरसते ही फसलें खूब उगतीं और संसार में अकाल नहीं पड़ता। उसी तरह वह चाँद-सितारे, हवा-पानी, सबको अपने काबू में रख कर उन से लोगों की भलाई के लिए काम कराती। कोई लोगों की बुराई न कर पाता।

लेकिन ये सब काम अकेले करना क्या आसान था? इसलिए उसने सोचा कि अपनी मदद करने के लिए किसी को ले आए। किंतु ऐसी जिम्मेदारी का काम हरेक को सौंपा भी नहीं जा सकता था। इसलिए कोई ऐसा आदमी चाहिए था जो सावधानी से जिम्मेवारी महसूस करके काम करे। ऐसा विश्वास-पात्र व्यक्ति कहाँ मिले?

एक दिन जगन्माता अपने विमान पर चढ़ कर पृथ्वी पर जा उतरी। उसने चारों ओर घूम कर देखना शुरू कर दिया। यों जाते जाते उसे एक झोंपड़ी दिखाई दी। उसमें सिर्फ़ एक माँ-बेटी रहा करती थीं। लड़की का नाम सुजाता था। उस सुन्दर लड़की पर जगन्माता की नजर गड़ गई। उसे देखते ही माता ने सोचा—'हाँ, यह मेरे काम के लायक़ है।'

उस लड़की की माँ ने माता से अपनी ग़रीबी का दुखड़ा रोना शुरू

शीलवती देवी

कर दिया। 'हाय! ऐसी सुन्दर बिटिया जो राज-महल की रौनक़ बढ़ा सकती थी, मेरे साथ रह कर भूखों मर रही है।' उसने आँसू बहाते हुए कहा। तब माता ने उस बुढ़िया को धीरज बँधा कर कहा—'नानी! तुम कुछ चिंता न करो! तुम्हारी लड़की की देख-भाल मैं किया करूँगी। उसे मेरे साथ भेज दो। मैं उसे किसी चीज़ की कमी न होने दूँगी। देख लेना, मैं उसे रानी बनाऊँगी, रानी!'
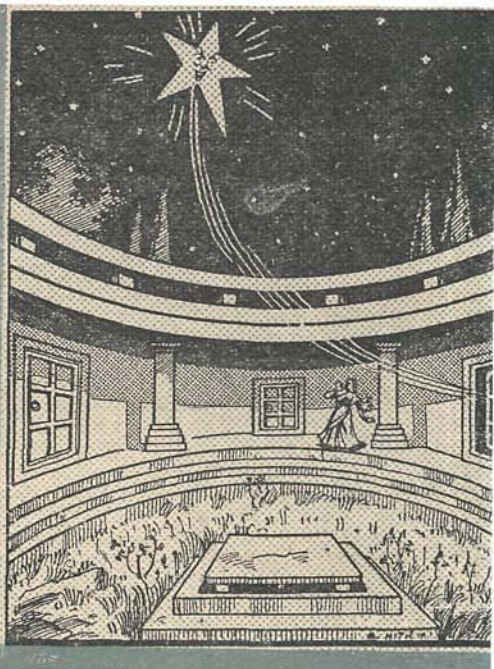
बुढ़िया ने तुरंत माता की बात मान ली। उसने कहा—'बेटी! इससे बढ़ कर मुझे और क्या चाहिए? तुम जरूर इसे अपने साथ ले जाओ। मेरी बिटिया कहीं भी क्यों न रहे; बस, सुख से रहे। यही मेरे लिए काफी है!' माता तब उस लड़की को तुरन्त अपने विमान में चढ़ा कर अपने महल में ले गई। दूसरे दिन से उसने सुजाता को अपना सारा काम-धंधा सिखाना शुरू कर दिया। कुछ ही दिनों में सुजाता ने ग्रहों को क़ाबू में रखना, उन्हें मौके पर छोड़ना, फिर क़ैद करना, यह सब कुछ सीख

लिया। यहाँ तक कि माता की ग़ैर-हाज़िरी में वही सारे काम किया करती।

लेकिन माता ने सुजाता को चेता दिया था कि महल के पूरब के तीन कमरे कभी न खोलो! सुजाता ने भी वादा किया था कि वह कभी उन कमरों की ओर झाँकेगी भी नहीं। लेकिन न जाने क्यों, सुजाता का मन हमेशा उन तीनों कमरों की तरफ़ लगा रहता।

उन्हीं दिनों एक बार जगन्माता को किसी काम से बाहर जाना पड़ा। बस, सुजाता को मौक़ा मिल गया। वह चुपके से धड़कता हुआ दिल लेकर उन कमरों की ओर गई। उसने उतावली से एक
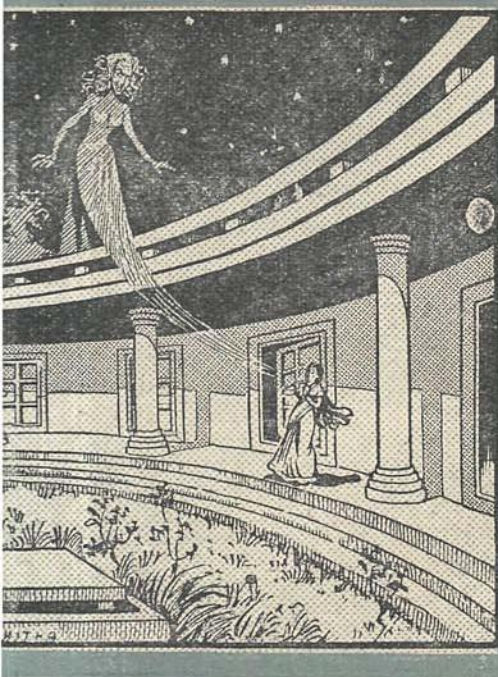
कमरे का दरवाजा खोला और झाँक कर देखा। बस, दरवाजा खोलना था कि एक पूँछ वाला तारा बाहर आया और सन्न की आवाज करते हुए आतिशबाजी की तरह उड़ कर आसमान में चमकने लगा। यह देख कर सुजाता भय से थर-थर काँपने लगी। इतने में माता ने आकर क्रोध से कहा—'इतने दिनों से मैंने सोचा था कि तुम बहुत विश्वास-पात्र हो। लेकिन आज तुमने मुझे धोखा दिया। तुम्हारी इस गलती से प्रलय-काल में छोड़ने लायक पूँछ वाला तारा छूट कर आसमान में चमकने लगा है। इसके प्रभाव से न जाने कितने बड़े-बड़े लोग मर जाएँगे और कितना अमंगल होगा? इस तरह काम नहीं चलेगा। तुम मेरे यहाँ से चली जाओ।' तब सुजाता ने माफी माँगी और वादा किया कि वह फिर कभी ऐसा नहीं करेगी। तब माता का गुस्सा ठंडा पड़ गया।

दो साल बीत गए। फिर एक बार माता को किसी काम से बाहर जाना पड़ा। सुजाता अब तक पिछली बात भुला चुकी थी। मौक़ा मिलते ही वह तुरन्त दूसरे कमरे के पास गई और दरवाजा खोला। तुरन्त विकराल रूप वाला अकाल का दैत्य छूट कर भाग निकला और संसार में मौज से घूमने-फिरने लगा। माता ने वापस आकर यह देखा तो क्रोध से काँपने लगी। लेकिन इस बार भी सुजाता ने किसी तरह रो-धोकर उसका क्रोध शाँत किया। लेकिन माता ने साफ़ कह दिया—'अगर फिर यही चूक हुई तो लाख गिड़गिड़ाने पर भी नहीं छोड़ूँगी। तुम्हें यहाँ से निकाल कर ही दम लूँगी।'

सुजाता दूसरे दिन से अपना काम-काज फिर ठीक से करने लगी। इस तरह

फिर दो साल बीत गए। माता को फिर एक बार किसी काम से बाहर जाना पड़ा। उसके जाते ही सुजाता ने सोचा–तीसरा कमरा भी खोल कर देखने में क्या हर्ज है? इस बार जरा सा झाँक कर तुरन्त फुर्ती से दरवाजा बन्द कर दूँगी।' यह सोच कर उसने 'तीसरे कमरे के पास जाकर दरवाजा खोल कर झाँका।

तुरंत तूफ़ान का राक्षस जो इसी मौके की ताक में था, अट्टहास करते हुए, प्रलयङ्कर लहरें उठाते हुए छूट कर भाग निकला। बेचारी सुजाता लाख कोशिश करने पर भी उसे भागने से न रोक सकी।

माता ने लौट कर आते ही गुस्से से लाल होकर कहा—'जा, अब तू यहाँ एक क्षण भी नहीं रह सकती। तूने मुझे तीन बार धोखा दिया। इसलिए मैं तुझे शाप देती हूँ। जा, तेरा सत्यानाश हो जाएगा।'

अब तो सुजाता रोती-धोती माफी माँगती हुई उसके पैरों पर गिर पड़ी। आख़िर माता ने तरस खा कर कहा–'तुझे अपनी करतूत की सजा तो भोगनी ही पड़ेगी। तू गूँगी बन कर जङ्गलों-पहाड़ों में घूमती फिरेगी। जब तेरा प्रायश्चित्त पूरा हो जाएगा तो शाप छूट जाएगा।' यह कह कर माता चली गई। अब सुजाता शाप के कारण जङ्गलों में भटकने लगी। जाते जाते जब उसके पैर थक गए तो वह जंगली जानवरों के डर से एक पेड़ की डाल पर चढ़ कर बैठ गई। वह पेड़ एक सरोवर के किनारे था। उसी समय निकट के नगर का राजकुमार शिकार खेलते हुए उधर आ निकला। उसे अचानक प्यास लगने के कारण वह पानी
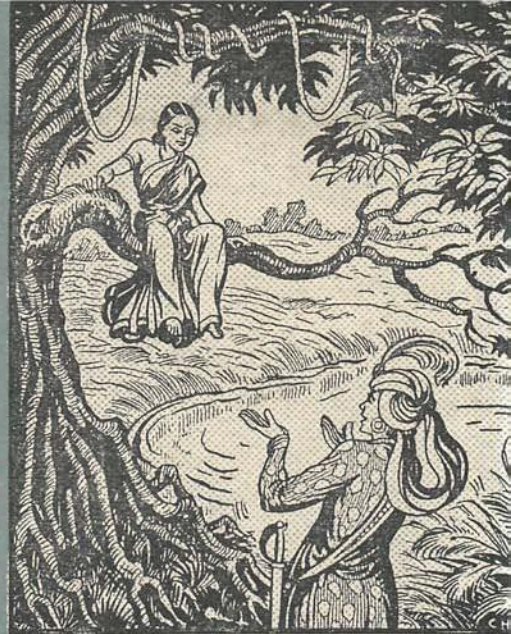
पीने के लिए सरोवर के पास आया। उसे पानी में सुजाता की परछाईं जो दीख पड़ी तो उसने सर उठा कर ऊपर देखा। सुजाता का रूप देखते ही राजकुमार का मन काबू से बाहर हो गया। उसने उससे अपनी रानी बनने की प्रार्थना की। लेकिन सुजाता तो शाप के मारे गूँगी बन गई थी न? फिर वह जवाब कैसे देती?

राजकुमार ने सोचा कि वह लजा रही है। धीरे-धीरे वही बातें करने लगेगी। इसलिए उसने उसे अपने नगर में ले जाकर बड़ी धूम-धाम से ब्याह कर लिया। उसे तब भी मालूम न था कि वह गूँगी है। इसी तरह कुछ दिन बीत गए। लेकिन सुजाता के मुँह से एक भी बात न निकली। राजकुमार ने उससे बात कराने की बहुत कोशिश की। अन्त में उसे मालूम हो गया कि वह गूँगी है। तब उसे गुस्सा आ गया और उसने उसे शहर के बाहर एक झोंपड़ी बना कर उसमें रखा। उस झोंपड़ी में अकेली रहने पर सुजाता को एक एक करके अपनी सारी गलतियाँ याद आईं। अब वह बहुत पछताने लगी। उसे जब याद आया कि उसने माता को तीन बार धोखा दिया है तब वह रोने लगी। इस तरह कुछ दिन तक पश्चात्ताप करने के बाद सुजाता का शाप दूर हो गया और वह पहले की तरह बोलने-चालने लगी। उसी रात जगन्माता ने राजकुमार को सपने में दर्शन देकर सुजाता की सारी कहानी कह सुनाई। दूसरे दिन राजकुमार अपने दरबारियों के साथ आकर सुजाता को फिर प्रेम से लिवा ले गया। इससे सब लोगों को खुशी हुई। सुजाता अब अपने पति के साथ सुख से दिन बिताने लगी।

सुजाता की गलतियों से पुच्छल तारे, अकाल और तूफान जैसे दैत्य माता की क़ैद से छूट कर संसार में सुख से विहार करने लगे। वे आज भी हम सबको तंग किया करते हैं।

बाघ और सियार में बातचीत होने लगी। सियार ने बाघ से कहा—'बाघ-मामा! बाघ-मामा! कल तो समझ लो कि मेरे लिए दावत है। तोतानगर की राजकुमारी जो राज-व्रण से पीडित है कल मर जाएगी। कल तो मैं खूब मौज उड़ाऊँगी।'

'अच्छा तो सियार, क्या इस राज-व्रण की कोई दवा ही नहीं है?' बाघ ने पूछा। 'है क्यों नहीं? इस मंदिर की दीवार की दरार में एक सात पत्तों वाला पौधा उगा हुआ है। अगर इन पत्तों को उस व्रण पर बाँध कर तीन दिन तक रखा जाय तो फिर राजकुमारी बिलकुल चंगी हो जाए।' सियार ने जवाब दिया।

बालचन्द्र ने सारी बातें सुन लीं। उसने तड़के ही उठ कर दीवार पर के पौधे के सातों पत्ते तोड़ कर झोली में डाल लिए। फिर वहाँ से चल कर पहर दिन बीतते बीतते तोतानगर में भठियारिन के घर जा पहुँचा। 'नानी! मैं तुम्हें एक अशर्फी दूँगा। जल्दी से रसोई बना कर मुझे खिला दो।' बालचन्द्र ने भठियारिन से कहा।

'हाय बेटा! मैं अभी रसोई कैसे बनाऊँ? हमारी राजकुमारी राज-व्रण से पीडित है। सुना है कि उसकी हालत बहुत नाजुक है। मुझे तुरन्त वहाँ जाना है। तुम आज किसी दूसरी जगह खाने का इन्तजाम कर लो!' भठियारिन ने कहा।

'अगर तुम मुझे रसोई बना कर खिला दो तो मैं तुम्हारी राजकुमारी को चंगी कर दूँगा!' राजकुमार ने कहा।

'बड़े बड़े वैद्यराज आए और निराश हो कर लौट गए। उस व्रण को तुम क्या

अच्छा करोगे? अगर तुमको उतनी भूख लग रही हो तो रात की रसोई बची है। कलेवा कर लो!' भठियारिन ने कहा और राजकुमार के लिए खाना परोस दिया।

खाते खाते राजकुमार ने पूछा–'नानी! मैं भी तुम्हारे साथ क़िले में आकर राजकुमारी का इलाज करूँगा। मुझे भी ले चलो न?'

भठियारिन ने उसकी बात मान ली।
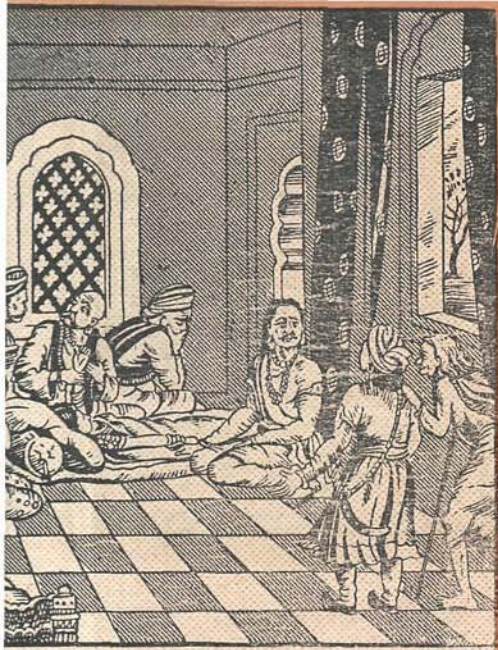
राजकुमार जब क़िले में गया तब तक राजकुमारी को ज़मीन पर लिटा दिया गया था। क्योंकि वैद्यों को नब्ज़ का पता नहीं चल रहा था। तब बालचन्द्र ने राजा से कहा कि मुझे एक बार राजकुमारी को देखने दीजिए। राजा ने पहले तो उसकी तरफ तिरस्कार-भाव से देखा। लेकिन आखिर उसने उसकी बात मान ली। बालचन्द्र ने नज़दीक जाकर घाव को अच्छी तरह देखा-भाला। फिर उस पर अपनी झोली में से सियार की बताई पत्तियाँ निकाल कर बाँध दीं।

धीरे धीरे राजकुमारी के मुख का तेज लौट आया। नब्ज़ चलने लगी। वैद्यों ने कहा—'नब्ज़ चल रही है। आज के लिए कोई ख़तरा नहीं है।' दूसरे दिन भी यही हाल रहा। वैद्यों ने कहा—'आज भी कोई ख़तरा नहीं है।' तीसरे दिन राजकुमार ने तड़के उठ कर पट्टी खुलवा दी। घाव का कहीं निशान भी न था। देख कर सब लोग दंग रह गए।

'तुम कोई मामूली आदमी नहीं हो। भगवान ने ही तुम्हें इस रूप में भेजा है।' राजा ने बालचन्द्र से कहा। सारे शहर में यह ख़बर बिजली की तरह दौड़ गई और लोग राजकुमार के दर्शन के लिए झुण्ड के झुण्ड आने लगे। राजा ने खुशी के मारे अपनी लड़की और राजकुमार को एक पालकी में चढ़ा कर नगर के बाजारों में बाजे-गाजे के साथ जुलूस निकाला।

पन्द्रह दिन वहाँ रहने के बाद राजकुमार ने राजा से बिदा माँगी। तब राजा ने कहा—

'बेटा! तुम्हीं ने मेरी लड़की की जान बचाई है। इसलिए उचित है कि तुम उससे शादी भी कर लो।'

तब बालचन्द्र ने अपना सारा क़िस्सा सुना कर कहा—'मैं जब फकीर की क़ैद से अपनी माँ को छुड़ा कर लौटूँगा, तभी आपकी लड़की से शादी कर सकूँगा।' फिर वह राजा से विदा लेकर चला और शीघ्र ही मैना-नगर पहुँचा। वहाँ खा-पीकर थोड़ी देर आराम किया और फिर नगवाडीह की ओर चला। थोड़ी दूर में उसे फकीर की मसजिद के गुंबज दिखाई देने लगे। बालचन्द्र ने सोचा—'हाय! उसी मसजिद में मेरी माँ बंदिनी है। इसी जगह पर मेरे पिताजी पत्थर बन गए थे।' इसी समय नगवाडीह की सरहद पर पहरा देने वाली भूतनी ने बालचन्द्र को आते देख लिया। तुरंत उसने सोलह वर्ष की युवती कन्या का रूप धर लिया और इठलाती, बल खाती, अनेक हाव-भाव दिखलाती बालचन्द्र के सामने आई। उसे देखते ही बालचन्द्र को तुरन्त साँप की चेतावनी याद आ गई। उसने जान

लिया कि यही पहरा देने वाली भूतनी है। उसने झट कमर से कटार निकाल कर उसे मार डालना चाहा। यह देख कर उस भूतनी ने थर-थर काँपते हुए कहा—'राजकुमार! मुझे मत मारो! मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ। अगर मुझे छोड़ दो तो मैं तुम्हें ऐसा उपाय बता दूँ जिससे तुम अपनी माँ से मिलो।'

'अच्छा, तो झट वह उपाय बता दो!' बालचन्द्र ने कहा।

'नगवाडीह में एक बुढ़िया मालिन रहती है। वही फकीर के लिए फूलों के गजरे गूँथ कर ले जाया करती है। तुम उसके घर जाकर प्यास बुझाने के लिए पानी माँगो। तब वह पूछेगी कि 'बेटा! तुम कौन हो?' तुम बताना कि मैं वीरपाल हूँ। मेरा पिता माली शूरपाल था और मेरी माँ का नाम मुनिया था। तुम यह भी बता देना कि मेरे माँ-बाप दोनों मर गए हैं। फिर तुम्हें अपनी माँ के दर्शन पाने का उपाय मिल जाएगा।' यह कह कर उस भूतनी ने अपनी छड़ी बालचन्द्र को दे दी और जान बचा कर भाग गई। बालचन्द्र ने बुढ़िया मालिन के घर जाकर भूतनी के कहे अनुसार किया। तुरन्त उस बुढ़िया ने 'हाय! मेरे पोते हो तुम तो!' कह कर उसको गले से लगा लिया। 'क्या तुम्हारे माँ-बाप कुशल से हैं?' फिर उसने पूछा।

'दोनों कभी के चल बसे!' बालचन्द्र ने उदास चेहरा बना कर कहा। यह सुन कर उस बुढ़िया ने भी थोड़ी देर तक आँसू बहाए और फिर पोते से कहा कि 'बेटा! अब तुम यहीं रह जाओ।' बालचन्द्र तो यह चाहता ही था।

एक दिन बुढ़िया मालिन फकीर के लिए गजरे गूँथ रही थी। तब बालचन्द्र ने कहा—'नानी! मैं भी फूलों के अच्छे अच्छे गजरे गूँथ सकता हूँ।'

'तो बेटा! तुम भी गूँथो!' उसकी नानी ने कहा। तब बालचन्द्र ने बड़ी

चतुराई से तरह तरह के बड़े-बड़े गजरे गूँथे जिससे उन्हें देखते ही फकीर का मन खुश हो जाए। फिर उसने अपनी माँ नागवती के के लिए एक भद्दा सा गजरा बनाया और उसके बीच में अपनी अँगूठी पिरो कर छिपा दी। बुढ़िया मालिन उन गजरों को लेकर फकीर के पास गई। उन गजरों को देख कर फकीर ने खुश होकर पूछा—'बुढ़िया! ये गजरे आज किसने गूँथे हैं?'

बुढ़िया ने जवाब दिया—'मेरे नाती ने गूँथे हैं। वह दो तीन दिन हुए पच्छिम से आया है।'

तब फकीर ने मालिन का वेतन बढ़ा दिया और कहा—'जा! अपने नाती की अच्छी तरह देख-भाल कर! लड़का होनहार मालूम पड़ता है।' तब मालिन ने नागवती के पास जाकर उसका गजरा उसे दे दिया। 'मैं गजरा लेकर क्या करूँगी?' यह कह कर उसने गजरे को दूर फेंक दिया। गजरा टूट गया और अँगूठी नीचे गिर पड़ी। उस अँगूठी को नागवती ने देखते ही पहचान लिया। उसे ऐसा लगा जैसे उसने अँगूठी को नहीं, अपने लड़के को ही देखा हो। उसे आनन्द हुआ और साथ साथ दुख भी। उसने सिसक कर रोते हुए कहा—'हाय!

बेटा! तो यह अँगूठी तुमने भेजी है? तुम मुझे ढूँढ़ते यहाँ तक पहुँच गए? बेटा! तुम यहाँ क्यों आए? इस पापी के हाथों से तुम कैसे बचोगे? यह तो तुम्हारे पिता और उनकी सारी सेना को हड़प गया है।' यों रोते हुए उसने अँगूठी अपनी उँगली में पहन ली।

अब बालचन्द्र रोज़ रोज़ नए ढंग के गजरे गूँथ कर फकीर को खुश करने लगा। एक दिन फकीर ने मालिन से कहा—'बुढ़िया! तू अपने नाती को यहाँ एक बार लाकर मुझे दिखा दे!' दूसरे दिन गजरे लाते वक्त बुढ़िया ने बालचन्द्र को अपने साथ लाकर फकीर से मिला दिया। फकीर ने उसे देख कर बहुत ही खुश होकर कहा—

'अरे छोकरे! तू गजरे तो बहुत अच्छे गूँथता है! मैं तुझसे बहुत खुश हूँ। बोल, तू क्या चाहता है? हीरे-जवाहरात कि हाथी-घोड़े?' 'हुजूर! मैं हाथी-घोडे और सोना-जवाहिरात लेकर क्या करूँगा? मैंने सुना है कि आपकी एक बारह खंभों वाली बहुत ही सुन्दर मसजिद है। अगर आप मुझे एक बार उसे देखने दीजिए तो बड़ी कृपा होगी। मुझे और कुछ नहीं चाहिए।' बालचन्द्र ने कहा। 'अरे! उस मसजिद में तो श्रीनगर की नागवती रहती है। वह व्रत कर रही है। इसलिए बारह बरस तक मैं उस मसजिद में क़दम भी नहीं रख सकता। इसलिए तू और कुछ माँग ले!' फ़कीर ने जवाब दिया। 'हुजूर! आपके वहाँ आने की क्या जरूरत है? इजाज़त हो तो मैं ही खुद जाकर देख आऊँ।' बालचन्द्र ने कहा। 'अरे! उस मसजिद के दरवाजे तो मन्तर से बँधे हुए हैं। तू वहाँ अकेले कैसे जाएगा? अच्छा ले, तुझे दरवाजा खोलने का मन्तर बताए देता हूँ। तू जाकर मसजिद देख आ।' यह कह कर फ़कीर ने राजकुमार को मसजिद का दरवाजा खोलने और बन्द करने का मन्तर बता दिया! थोड़ी ही देर में बालचन्द्र ने मसजिद में प्रवेश किया तो उसने अशोक-वन में सीता की तरह उदास बैठी हुई अपनी माँ को देखा। वह हलके हलके पग धरता हुआ उसके निकट गया।

अब तक नागवती ने सिर उठा कर उसकी तरफ़ देखा भी न था। क्योंकि उसका विश्वास था कि फ़कीर के सिवा वहाँ और कोई नहीं आ सकता? इसलिए उसने पैरों की आहट नजदीक आते देख कड़क कर कहा—'रे फ़कीर! रुक जा वहीं! ख़बरदार! अगर एक क़दम भी आगे बढ़ाया तो तेरा सिर सौ टूक हो जाएगा।' तब बालचन्द्र ने कहा—'माँ! मैं फ़कीर नहीं हूँ। मैं तुम्हारा बेटा हूँ। देख! मेरी ओर सिर उठा कर देख तो? मैं बालचन्द्र हूँ।' नागवती ने सन्देह के साथ सिर उठा कर देखा और कहा—'मैं कैसे

विश्वास करूँ? हो सकता है, यह फकीर की ही कोई चाल हो!' 'नहीं माँ! मैं तुम्हारा बालचन्द्र हूँ। इस दुष्ट पापी फकीर का संहार करके तुम्हारी रक्षा करने के लिए मैं अनेकों कष्ट झेल कर बड़ी दूर से आया हूँ। मैंने बुढ़िया मालिन के हाथों अपनी अँगूठी भी भेजी थी। माँ, तुम व्यर्थ सन्देह में समय नष्ट न करो। अगर मैं जल्दी नहीं लौटूँगा तो फकीर को शक हो जायगा। मुझे तुमसे बहुत सी बातें करनी हैं।' बालचन्द्र ने दीन-स्वर में कहा। अब नागव्रती का सारा सन्देह दूर हो गया। उसने तुरन्त अपने लाड़ले लड़के को गले से लगा लिया। माथा सूँघा। उसे चूमते हुए उसका मन भरता ही न था। उसकी आँखों से आँसू की धारा बह चली। 'बेटा! तू अभी दुधमुँहा बच्चा है। बारह हजार सेना को कंकड़-पत्थर बना देने वाले फकीर से तू कैसे जीतेगा? अब तू चुपके से घर लौट जा! मेरी बात मान ले! मुझे भूल जा! समझ ले कि तेरे माँ नहीं है; तेरी माँ कभी की मर गई है। जा, उनके पास लौट जा जिन्होंने तुझे पाल-पोस कर बड़ा किया है। जा बेटा, जा! मैंने आँख भर कर तुझे एक

बार देख लिया। यही काफ़ी है।' यह कह कर वह रोने लगी। बालचन्द्र ने बड़ी मुश्किल से उसको धीरज बँधाया और उसके कानों में एक उपाय बतलाया। फिर वह उससे विदा लेकर मसजिद के किवाड़ बन्द कर फकीर के पास लौट आया, जैसे वह कुछ जानता ही न हो। 'क्यों रे छोकरे! कैसी है मेरी मसजिद?' फकीर ने पूछा। 'हुजूर, उस मसजिद की सुन्दरता देख कर मैं भूख-प्यास भी भूल गया हूँ। वह जगह छोड़ कर आने का मन ही न चाहता था। बड़ी मुश्किल से यहाँ आया हूँ।' बालचन्द्र ने जवाब दिया। तब फकीर ने ठठा कर हँसते

हुए कहा—'पगले कहीं के! कहीं मसजिद देखने से भी पेट भरता है? अरे, पेट भरता है पकवान खाने से और मन को सुख होता है नए-नए राज जीतने से।' तब बालचन्द्र फकीर से छुट्टी लेकर मालिन के साथ घर गया।

दूसरे दिन नागवती ने सबेरे उठ कर नहा धो लिया। फिर रेशमी कपड़े और तरह तरह के गहने पहने। पान लगाया। उसने फकीर के लिए तरह तरह के पकवान बनाए! सज-धज कर राह देखने लगी कि फकीर अपने बाग में सैर करने कब आता है? उसके वहाँ आते ही उसने भोजन करने का न्योता दिया।

फकीर ने भर-पेट खाया-पिया। फिर उसने शराब पी, अफ़ीम खाई और तीन मन गाँजा चिलम में डाल कर फूँकने लगा। उसका मन सातवें आसमान में उड़ने लगा। इसी समय मालिन गजरे लाकर वहाँ रख गई। तब नागवती चूड़ियाँ खनकाती, पायल झनकाती, हीरे-जवाहरात की चमक से आँखों में चकाचौंध पैदा करती, धीरे धीरे चल कर फकीर के निकट आई और मुसकुराती हुई वहाँ खड़ी हो गई। [सशेष]

त्रेता-युग में दुंदुभी नाम का एक दैत्य रहता था। उसका सिर भैंसे का सा था। उसे दूसरों से लड़ने में बड़ा आनंद आता था। इसलिए वह हमेशा सोचता रहता कि किससे झगड़ा मोल लूँ। एक दिन उसने सागर महाराज के पास जाकर कहा—'हे समुद्र! कहा जाता है कि तुम भी पंच-भूतों में से एक हो। तुम्हें अपनी गंभीरता पर बड़ा गर्व भी है। लेकिन अगर तुम सचमुच वीर हो तो आओ! मुझसे लड़ कर जीतो!' उसने उसे ललकारा।

तब समुद्र ने कहा—'मुझे अभी तुमसे लड़ने की फ़ुरसत नहीं है। मुझ में उतनी ताक़त भी नहीं है। हाँ, अगर तुम पर्वत-राज हिमालय के पास जाओ तो तुम्हारी इच्छा पूरी हो।'

दुंदुभी तुरन्त हिमालय के पास गया। उसने सोचा—'शूर समर करनी करहिं, कहि न जनावहिं आप।' इसलिए तुरन्त अपनी सींगों से हिमालय को हिलाना शुरू कर दिया।

तब गिरि-राज ने अपने ऊँचे शिखर से उतर कर कहा—'क्यों भई! क्यों बेकार मेरी चटनी बना रहे हो? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?

तब दुंदुभी ने हुङ्कार कर कहा—'सागर ने बताया था कि तुम बड़े वीर हो। इसलिए मैं देखना चाहता हूँ कि तुम में कितनी वीरता है?'

तब हिमालय ने जवाब दिया—'यह सागर की ग़लती थी। मैं वीर हो भी सकता हूँ। लेकिन तुमसे लड़ना मेरी सामर्थ्य से बाहर है। मैं कोई बेवकूफ नहीं हूँ जो अपने से ज्यादा बलवानों से जाकर भिड़ जाऊँ! तिस पर अभी मुझे फ़ुरसत भी नहीं है। क्योंकि बहुत से ऋषि-मुनि

रमेश बनर्जी

लोग मेरे आश्रय में तप कर रहे हैं। वे शाँति के प्रेमी हैं। उन्हें लड़ना-झगड़ना पसन्द नहीं।'

तब दुंदुभी ने कहा—'अरे! गिरि-राज! आप तो इतने में नरम पड़ गए! अजी, जरा लड़ो तो सही! मैंने प्रण कर लिया है कि आज किसी न किसी वीर को जीत कर ही घर लौटूँगा।'

उसका जोश देख कर हिमालय ने कहा—'दुंदुभी! तुम्हारी वीरता में किसी को शक नहीं हो सकता। शायद तुम वानरों के राजा वालि को जानते ही होगे। उसके जैसा वीर मिलना मुश्किल है। अगर तुम जाकर उसे ललकारो तो तुम्हारी लड़ने की इच्छा पूरी हो जाएगी।'

उसके इतना कहते ही दुंदुभी ने कहा—'हाँ, यह ठीक है! तुम न लड़े तो न सही! कम से कम मुझसे लड़ने वाले का नाम तो सुझा दिया।' यह कह कर मन ही मन खुश होता दुंदुभी किष्किंधापुर की ओर चल दिया।

जब वह वहाँ पहुँचा तो आधी रात हो रही थी। वालि गहरी नींद में खुर्राटे ले रहा था। दुंदुभी की बादलों जैसी गरज सुन कर उसकी नींद टूट गई। उसने कहा—'रे दुंदुभी! मैं तुझे खूब अच्छी तरह जानता हूँ! क्यों बेकार आधी रात के वक्त यहाँ आकर हो हल्ला मचा रहा है? जा, जा! मैंने तेरा पहला कसूर जान कर इस बार माफ़ कर दिया!' तब दुंदुभी ने हँसते हुए कहा—'इतनी उदारता दिखाने की कोई जरूरत नहीं। मैं आया हूँ तुझसे लड़ने और लड़ कर जीतने। इसलिए अगर उदारता दिखानी होगी तो मैं ही दिखाऊँगा। आज रात तू आख़िरी बार खूब आराम कर ले।

तुझे सवेरा होते ही मुझसे लड़ना होगा। मैं तड़के आऊँगा।' यह कह कर दुंदुभी गरजते हुए चला गया।

सबेरे ही आकर दुंदुभी ने फिर सिंह-नाद किया। तब वालि ने उस से कहा—'क्या तुझे अब भी अक्ल न आई? क्या तू अब भी मुझसे लड़ना चाहता है? वास्तव में तुझ जैसे नीच से लड़ने में मेरी ही हेठी है। लेकिन संसार के कल्याण के लिए मैं तेरा वध करूँगा।' यह कह कर वालि एक ही क्षण में उससे लड़ने के लिए कमर कस कर आ गया!

दूसरे ही क्षण दोनों भिड़ गए। लेकिन दुंदुभी के हारने में ज्यादा देर न लगी। वालि ने विजय के हर्ष में गरजते हुए उसके प्राण-रहित शरीर को अपनी पूरी ताक़त लगा कर एक ठोकर मारी। वह लाश वहाँ से उड़ती हुई सीधे ऋष्य-मूक पर्वत पर मतंग मुनि के आश्रम में जा गिरी। दुंदुभी के घावों से बहते हुए रक्त की धारा से वह सारा प्रदेश तर-बतर हो गया।

मतंग मुनि ने ध्यान लगा कर देखा तो उन्हें सारा क़िस्सा मालूम हो गया। उन्हें

वालि पर बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने तुरन्त शाप दिया—'जिस की यह करतूत है वह पापी इस पर्वत पर पग धरेगा तो सिर टूक टूक हो कर मर जाएगा।' यह ख़बर जब वालि को मालूम हुई तो वह बहुत पछताने लगा। लेकिन अब वह क्या कर सकता था? ऋषि का शाप तो लौटाया नहीं जा सकता। इसी शाप के भय से वालि ने फिर कभी ऋष्य-मूक पर्वत पर क़दम रखने का साहस नहीं किया। देखा तुमने? वालि जैसे शूरवीर को भी मुनि के शाप के आगे हार माननी पड़ी।

जीवन का अर्थ

एक ग़रीबिन के दो लड़के थे। जब उन्हें और कोई सहारा न रहा तो एक दिन उस ग़रीबिन ने अपने लड़के से कहा—' बेटा! कहीं जाकर कुछ कमा क्यों नहीं लाते?' यह सुन कर बड़ा बेटा दूसरे दिन कमाने के लिए निकला। राह में उसे एक बूढ़ा दिखाई दिया। उसने पूछा—' बेटा! तुम इधर कहाँ जा रहे हो?'

तब उस लड़के ने जवाब दिया—' मैं नौकरी की खोज में जा रहा हूँ। रुपया-पैसा कमाना है।'

यह सुन कर उस बूढ़े ने उसे अपनी भेड़ें चराने का काम दिया। दूसरे दिन बूढ़े ने उस लड़के से कहा—' बेटा! तुम इन भेड़ों के साथ जाना। वे तुम्हें जिधर ले जाएँ तुम उधर उनके पीछे पीछे जाना। लेकिन तुम खुद उन्हें किसी ओर हाँकना नहीं। शाम होते ही घर लौट आना।' यह कह कर उसने उसे भेड़ चराने के लिए भेज दिया।

बड़ा भाई बूढ़े की बात मान कर भेड़ों के पीछे पीछे चला। वे भेड़ें चलतीं चलतीं एक बड़े मैदान में जा पहुँचीं। और थोड़ी दूर जाने पर वेग से बहता हुआ एक झरना दिखाई दिया। भेड़ें उस झरने को आसानी से पार कर गईं। लेकिन लड़के को डर लगा। वह किनारे पर ही खड़ा रह गया। शाम होते ही सारी भेड़ें फिर झरने को पार कर इस ओर आईं और घर की ओर चलीं। उनके पीछे पीछे लड़का भी घर पहुँचा। उसे देखते ही बूढ़े ने पूछा—' बेटा! भेड़ों के पीछे पीछे जाकर तुमने क्या क्या देखा?' तब लड़के ने जवाब दिया—' दादा! भेड़ों के साथ जाकर पहले मैंने एक सुन्दर मैदान

श्यामसुन्दर

देखा। उसके बाद भेड़ें वेग से बहते हुए एक झरने को पार कर उस किनारे गईं। लेकिन मुझे डर लगा। इसलिए मैं उनके साथ नहीं जा सका।'

यह सुनते ही उस बूढ़े को क्रोध आ गया। उसने कहा—'तुम मेरी नौकरी करने लायक़ नहीं हो। जाओ; मैंने तुम्हें निकाल दिया!' यह कह कर उसने उस लड़के को वहाँ से भगा दिया।

तब बड़े ने उदास मन से घर लौट कर सारी बातें अपने भाई से कह दीं। उसने कहा—'भैया! मैं जाता हूँ। देखूँगा, मैं वह नौकरी कर सकता हूँ कि नहीं?' यह कह कर वह तुरन्त घर से चला। उसने भी राह में बूढ़े से मिल कर उसकी भेड़ें चराने का काम ले लिया।

दूसरे दिन बूढ़े ने फिर उससे कहा—'बेटा! तुम इन भेड़ों के साथ जाओ। वे तुम्हें जहाँ जहाँ ले जाएँ वहाँ वहाँ जाना। लेकिन उन्हें तुम हाँकना नहीं।' यह कह कर उसने उसे भेड़ों के साथ भेज दिया।

भेड़ें चलतीं चलतीं फिर उसी मैदान में जा पहुँचीं। लड़का भी उनके पीछे
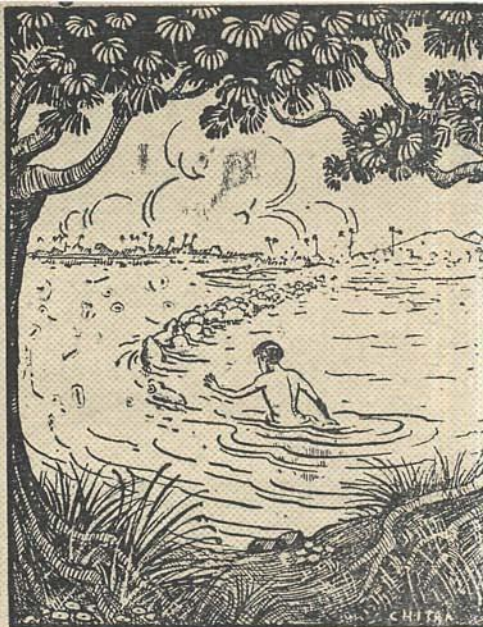
पीछे गया। भेड़ें फिर वेग से बहते हुए झरने को पार कर गईं। लड़के ने भी हिम्मत की और झरने में उतरा। उस पार पहुँचते पहुँचते वह बहुत थक गया और बेहोश होकर गिर पड़ा। जब उन भेड़ों ने पीछे लौट कर उस पर अपने नथुनों से फूँका तो उसे फिर होश आया। अब वह पहले से भी ज्यादा उत्साह से उनके पीछे पीछे चला। उसके बाद भेड़ें चलतीं चलतीं और एक बड़े मैदान में पहुँचीं। वहाँ हरी हरी घास खूब ऊँची उगी हुई थी। लेकिन वहाँ चरने वाले जानवर बहुत ही दुबले-पतले थे। सूख कर काँटे हो गए थे। वे भेड़ें वहाँ से चलतीं
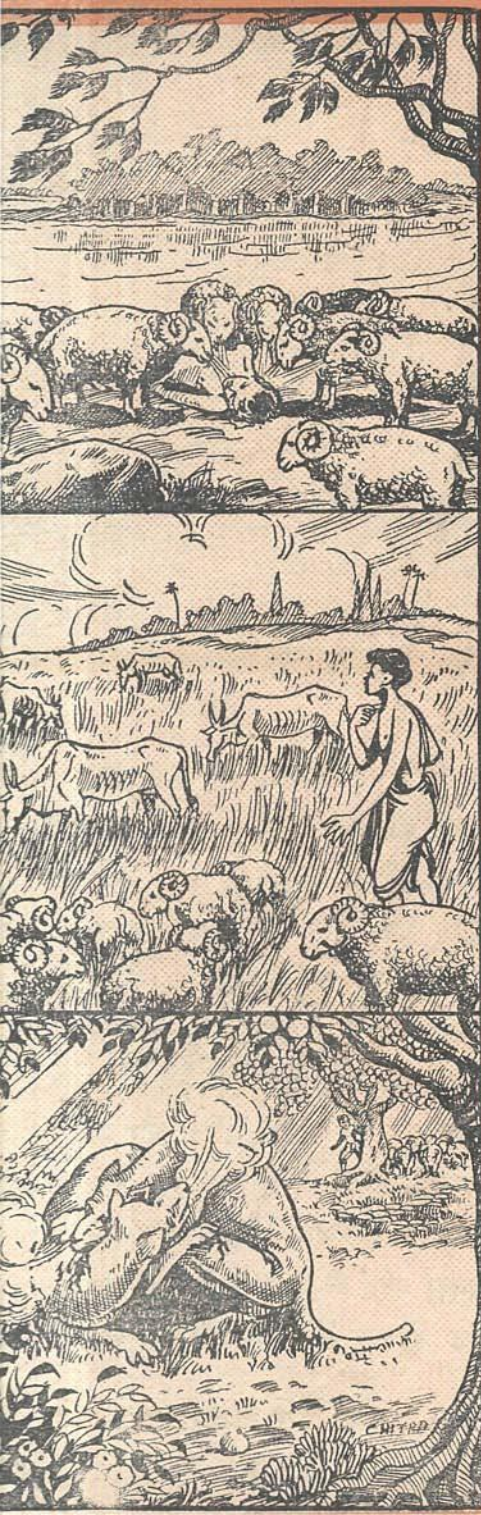
चलतीं और एक मैदान में जा पहुँचीं। वहाँ चरने लायक हरी घास बिलकुल नहीं थी।

तो भी उस मैदान के जानवर खूब तन्दुरुस्त और मोटे-ताज दिखाई दे रहे थे। वहाँ से भेड़ें उसे एक बाग में ले गईं। उस बाग के बीच दो शिकारी कुत्ते अपने नथुनों से आग उगलते हुए एक दूसरे से लड़ रहे थे। भेड़ें वहाँ से चल कर एक सुन्दर विशाल सरोवर के किनारे जा खड़ी हुईं। उस सरोवर में एक औरत एक कलछुल हाथ में लिए खड़ी थी और पानी में कोई चीज़ ढूँढ़ रही थी। और थोड़ी दूर जाने पर उसको एक सुन्दर फुलवारी दिखाई दी। उसमें तरह-तरह के फूल खिल रहे थे।

लड़का वहाँ जाकर आराम करने के लिए एक पेड़ के नीचे बैठ गया। इतने में एक सफेद कबूतर उड़ते हुए आकर उसके सामने बैठ गया। लड़के ने उसे एक ढेले से मारा। ढेला कबूतर को जाकर लगा। लेकिन कबूतर उड़ गया। हाँ, उसका एक पर नीचे गिरा। लड़के ने कुछ सोच-समझ कर वह पर अपनी झोली में रख लिया। थोड़ी देर में भेड़ें वहाँ से लौट कर घर की ओर चलीं।

लड़का भी उनके पीछे पीछे चलते हुए घर पहुँचा।

बूढ़े ने उसे देखते ही पूछा—'बेटा! तुम भेड़ों के साथ जाकर क्या क्या देख आए?'

तब लड़के ने जो जो देखा था सब कह सुनाया। तब बूढ़े ने यों कहना शुरू किया—'बेटा! तुमने भेड़ों के साथ जाकर जो हरा भरा सुन्दर मैदान देखा था, जानते हो वह क्या है? वही तुम्हारा यौवन है। वहाँ से होकर तुमने सब पापों को धो डालने वाली, प्राण-जल से भरी हुई मंदाकिनी में नहाया। उसमें उतरते ही तुम्हारे सभी पाप धुल गए। उस पार पहुँचने पर भेड़ों ने जब अपने नथुनों से तुम्हें फूँका तो तुम्हारी आत्मा पवित्र हो गई। वे भेड़ें तुम्हें मुक्ति देने वाली देवियाँ थीं।

उसके बाद तुमने हरे भरे मैदान में रह कर भी, दुबले सूखे हुए जानवर देखे। वे क्या हैं, जानते हो? वे ही कंजूस लोग हैं जो न आप खाते हैं और न दूसरों को ही खिलाते हैं। वे धन बटोरते रहने पर भी उससे कोई आनन्द नहीं पाते।
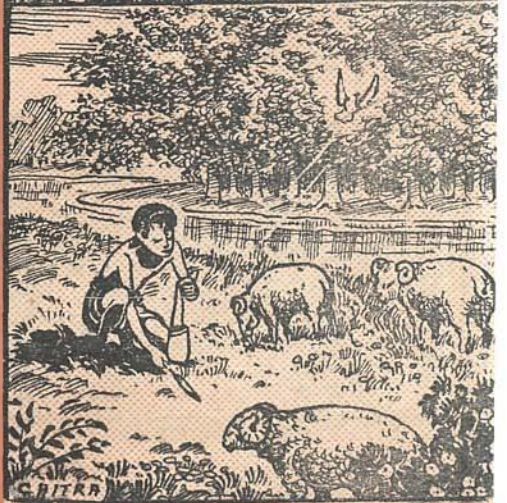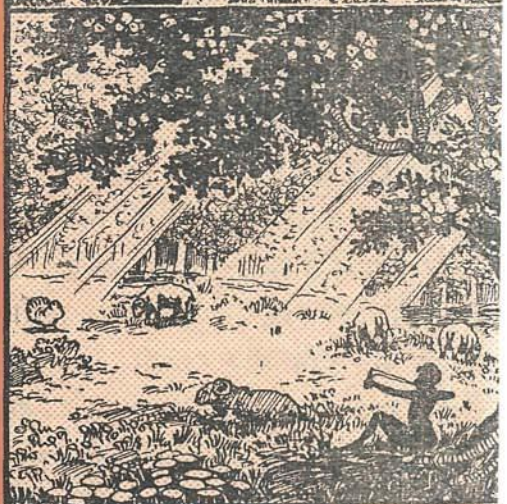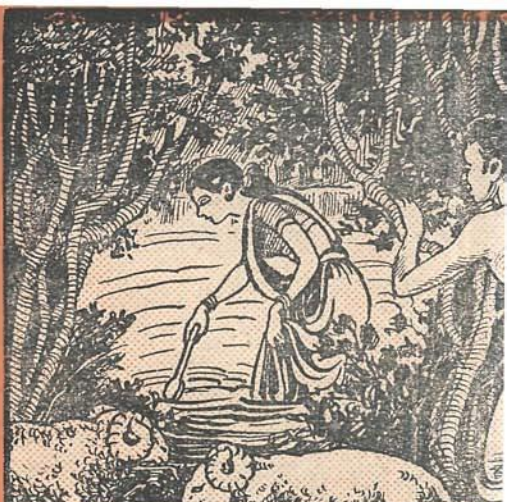
उसके बाद तुमने दूसरे मैदान में, चरने के लिए कुछ न रहने पर भी वहाँ के जानवरों को खूब मोटा-ताजा देखा। वे ही ऐसे लोग हैं जो ग़रीब होने पर भी दूसरों को देने में कभी नहीं हिचकते। इसलिए वे हमेशा सुखी रहते हैं। उन्हें किसी चीज़ की चिन्ता नहीं। उसके बाद तुमने जिन दो कुत्तों को देखा वही वे भाई हैं जो जमीन-जायदाद के लिए आपस में लड़ मरते हैं। फिर सरोवर में कलछुल हाथ में लिए, वह औरत कौन थी जानते हो? उस सुहागिन ने जिंदगी भर दूध में पानी मिला कर बेचा था। अब वह बेचारी दूध को पानी से अलग करने की कोशिश कर रही थी। लेकिन वह कभी ऐसा न कर सकेगी। अन्त में तुमने जो फुलवारी देखी थी, वही स्वर्ग है। पुण्य करने वाले वहाँ जाते हैं। क्या तुम मुझे कोई निशानी दिखा सकते हो कि तुम वहाँ तक जाकर लौट आए हो?' बूढ़े ने पूछा।

तुरन्त लड़के ने उसे अपनी झोली से कबूतर का पर निकाल कर दिखाया।

तब बूढ़े ने कहा—'वह कबूतर मैं ही था। मैं उस रूप में तुम्हारी हर चाल पर अपनी नज़र लगाए था। जान लो कि भगवान इसी तरह हमेशा मनुष्य की हर चाल ताकता रहता है! तुमने जब ढेला मार कर उस कबूतर का एक पर गिरा दिया तो मेरी एक उँगली टूट गई। देखो!' यह कह कर बूढ़े ने अपना हाथ दिखाया तो सचमुच एक उँगली टूटी हुई थी। बूढ़े ने फिर कहा—'अब मैंने तुम्हें जीवन का अर्थ समझा दिया है। आशा है, तुम मेरी इन बातों को हमेशा याद रखोगे। तब तुम्हें जीवन में कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। जाओ! मेरा आशीर्वाद तुम्हारी रक्षा करेगा।'

लड़के ने उस बूढ़े को सर झुका कर प्रणाम किया और घर जाकर अपने भाई और माँ के साथ सुख से रहने लगा।

किसी गाँव में कामू नाम का एक ब्राह्मण का लड़का रहता था। बचपन में ही उसके पिता मर गए थे। इसलिए उसने पढ़ना-लिखना कुछ नहीं सीखा। उसकी माँ हमेशा कहती—'बेटा! पढ़ना-लिखना सीख लो! तब तुम्हें कोई नौकरी मिल जाएगी।'

'कौन सी नौकरी? माँ! पढ़ने-लिखने से मुझे कैसी नौकरी मिलेगी?' कामू पूछता।

कामू के यों पूछते ही उसकी माँ को पड़ोस के एक गाँव में रहने वाले अपने भैया याद आ जाते। क्योंकि वे पटवारी का काम किया करते थे। कामू की माँ न जानती थी कि उस नौकरी को क्या कहते हैं। लेकिन वह समझती थी कि वह कोई बड़ी नौकरी है। क्योंकि उसके भैया हनुमान बाबू के घर कभी किसी चीज़ की कमी न रहती थी। किसानों के घर से चावल, दाल, तरकारियाँ वग़ैरह सभी सामान मुफ्त में आ जाता था। किसान लोग गाड़ियों पर लाद कर चारा-भूसा भी लाते और उनके घर में डाल कर चले जाते। इसलिए हनुमान बाबू ने पाँच भैंसें पाल रखीं थीं। बस, घर में हमेशा घी-दूध की नदी बहती रहती थी। यह सब याद करके कामू की माँ बेटे से कहती—'अरे! तुम्हें भी हनुमान मामू जैसी नौकरी मिल जाएगी। जानते हो, तुम्हारे हनुमान मामू ने पाँच-पाँच भैंसें खरीद रखीं हैं। उनके घर में दोनों पहर दूध-मलाई उड़ती है। अगर तू भी उन्हीं की तरह पढ़-लिख कर नौकरी करेगा तो तू भी उसी तरह पाँच भैंसें खरीद लेगा। फिर तो जितनी दूध-मलाई चाहे खा सकेगा।'

दूध-मलाई का नाम सुनते ही कामू के मुँह से लार टपकने लगी। 'तब तो मैं

जरूर पढ़ना-लिखना सीखूँगा और नौकरी करके पाँच भैंसें खरीदूँगा।' यह सोच कर उसने उस दिन से रोज़ स्कूल जाना शुरू कर दिया।

वह स्कूल तो जाता। लेकिन उसका ध्यान पाठ में न लगता। उसका सारा मन तो पाँच भैंसों और उनकी दूध-मलाई पर लगा रहता। पाठ सुनते सुनते उसकी आँखों के सामने मोटी-ताजी भैंस की काली तस्वीर नाचने लगती। इसलिए बहुत दिन तक स्कूल जाने पर भी उसे पढ़ना-लिखना कुछ न आया। वह नौकरी क्या करता, कम से कम दस्तखत करना तक न सीख सका।
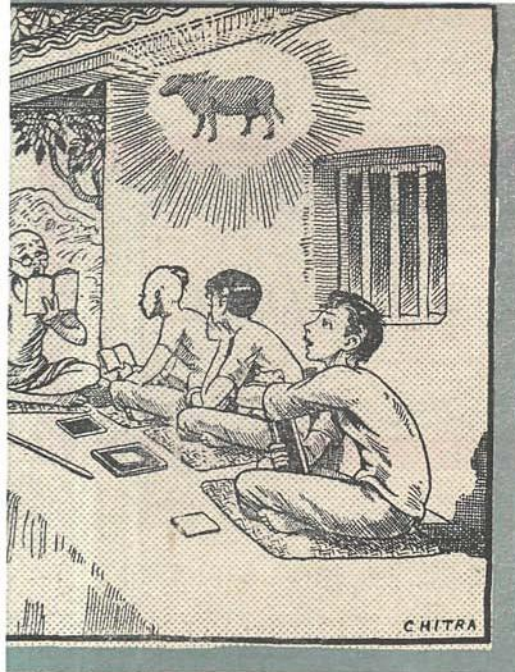
अपने लड़के की मूर्खता पर कामू की माँ को बहुत दुख हुआ। लेकिन करती क्या? उसने उसे सुधारने की लाख कोशिश की। लेकिन उसके लिए कुछ न हुआ। आख़िर तंग आकर उसने सोचा—'इसका ब्याह जल्दी हो जाय तो अच्छा हो! जब घर-गिरस्ती का बोझा सर पर पड़ेगा तो अपने आप राह पर आ जाएगा। तब उसे खुद रुपया कमाने का चसका लग जाएगा।' यह सोच कर तुरन्त कामू की माँ ने लड़के के लिए बहू ढूँढ़ना शुरू कर दिया। आख़िर बहुत ढूँढ़ने-फिरने के बाद नजदीक के एक गाँव में एक लड़की जँच गई। दोनों ओर से बातें हुईं। सब कुछ तै हो गया। एक हफ्ता बीतते बीतते बारात गई और कामू नई बहू को लेकर घर लौट आया। शादी भी अच्छी धूम-धाम से हुई।

सब के मन में खुशी हुई कि अब कामू गृहस्थ बन गया। लोग सोचने लगे कि अब वह सुधर जाएगा। कामू की माँ ने भी यही सोचा था कि ब्याह होते ही लड़का अपनी जिम्मेदारी आप महसूस करेगा और घर का काम-काज अपने सर पर ले लेगा। लेकिन वैसा कुछ नहीं हुआ।

उल्टे ब्याह होने ही कामू को घमण्ड हो गया कि अब वह बड़ा हो गया है। इसलिए घर का मालिक वही है। वह अब अपनी हुकूमत चलाने लगा। माँ से तो पहले से ही झगड़ता था। अब उसे झगड़ने के लिए बहू भी मिल गई। पतिदेव के गुस्सा होने पर समझदार औरत समय, असमय का विचार करके चुप रह जाती है। लेकिन कामू की बहू में उतनी समझ कहाँ थी? वह भी गुस्सा होकर कुछ न कुछ कह देती। 'तो क्या तू मुझसे जबान लड़ाएगी?' यह कह कर वह मूर्ख-राज उसे पीटने लगता। इस तरह घर में हर वक्त कुहराम मचा रहता था।

इसी तरह कुछ दिन बीते। एक दिन हनुमान मामू के घर से कामू की माँ के नाम निमन्त्रण-पत्र आया। उसके पढ़ने पर मालूम हुआ कि उनके बड़े लड़के का ब्याह होने वाला है। अपनी बहन को खुशखबरी सुनाने के ख्याल से हनुमान बाबू ने यह भी लिखा था कि दो हजार रुपए का दहेज भी मिल रहा है। पहले यह सुन कर कामू की माँ को खुशी हुई। लेकिन वह सारी खुशी धीरे धीरे डाह में बदल गई।

उसने अपनी सारी जलन बेटे पर उतारी—'देखा? निकम्मा कहीं का! तुझे एक धेला भी दहेज में न मिला! मिले कैसे? कुछ पढ़ा-लिखा भी होता तब न? मामू का लड़का पढ़ा-लिखा है। वह भी अपने बाप की तरह कोई अच्छी सी नौकरी कर लेगा। फिर उसे दो हजार रुपए का दहेज मिलने में अचरज क्या है?' उसने मुँह लटका कर कहा।

बेचारे कामू के मन में कोई डाह न पैदा हुई। लेकिन हनुमान मामू का नाम सुनते ही उसे उनकी नौकरी, पाँच भैंसों और दूध-मलाई की बात
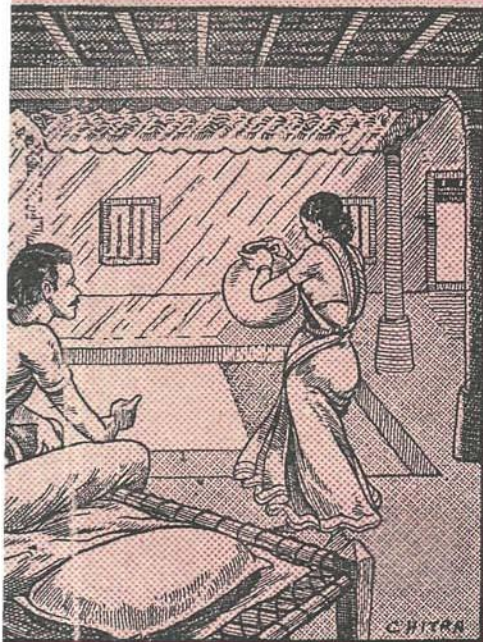
याद आ गई। उसके मन में भी फिर यह इच्छा पैदा हुई कि किसी न किसी तरह वैसी ही नौकरी करके वह भी पाँच भैंसें खरीदे और जी भर कर दूध-मलाई खाए। इतने में उसे अचार की हाँड़ी ले जाती हुई बहू दिखाई दी। उसके पाँच भैंसों के दूध के लिए कम से कम उतनी बड़ी हाँड़ी तो चाहिए ही। फिर एक बड़े से चूल्हे पर हाँड़ी चढ़ा कर दूध औंटाना होगा। यह सब सोचते ही उसके मन में एक खटका पैदा हो गया। दूध वग़ैरह सभी बहू के हाथ में रहेगा। बहू को पीहर वालों से बहुत प्रेम है। इसलिए वह कहीं मक्खन-घी वग़ैरह सभी जमा करके पीहर भेजती रहे तो? उसने सोचा—'यह बात अभी तय कर लेनी चाहिए।' उसने बहू को बुलाया।

बहू अचार की हाँड़ी हाथ में लिए आ खड़ी हो गई। 'क्यों? क्या चाहिए?' उसने पूछा। 'जब मैं नौकरी करके पाँच भैंसें खरीदूँगा तो तू दूध-दही, मक्खन-घी वग़ैरह अपने नैहर वालों को भेजेगी तो नहीं?' कामू ने गंभीरता से पूछा।

'भेजूँगी क्यों नहीं? जरूर भेजूँगी!' बहू ने जवाब दिया। उसका यह जवाब सुनते ही कामू का खून खौलने लगा। 'क्यों, भेजेगी न? क्यों न भेजेगी?' यह कह कर उसने दाँत पीसते हुए बहू को पीटना शुरू कर दिया। बेचारी के हाथ से छूट कर अचार की हाँड़ी धड़ाम से नीचे गिरी और सारा अचार जमीन पर चारों ओर छितरा गया।

उसी समय घर के किवाड़ खोल कर किसी के आने की आहट हुई। एक लंबे-तगड़े आदमी ने आकर कामू को पकड़ कर नीचे पटक दिया और खूब पूजा करने लगा। अब तो कामू जोर से चिल्लाने

लगा। 'बाप रे बाप! कोई मुझे बचाओ! यह तो मुझे मारे डालता है।' उसकी चीख-पुकार सुन कर आस-पड़ोस के बहुत से लोग दौड़ते हुए आए। उन्होंने कामू को उस व्यक्ति के हाथों भुरता बन जाने से बचाया।

वह व्यक्ति और कोई न था; वह कामू का साला था और उसका नाम भीमू था। वह अपनी बहन को लिवा जाने के लिए आया था। उसे देखते ही सब लोग मुँह बाए खड़े रह गए।

कोई कुछ न बोला। आखिर कामू की माँ ने ही साहस करके पूछा—'क्यों भीमू! पगला गए हो क्या? तुमने मेरे बेटे को क्यों इस तरह पीट दिया?'

'पहले अपने बेटे से पूछिए कि उसने मेरी बहन को क्यों पीटा?' भीमू ने जवाब दिया।

तब कामू की माँ ने बेटे से पूछा—'क्यों बेटा! बात क्या है? तूने बहू को क्यों पीटा? उसने क्या कसूर किया था?'

तब कामू ने दाँत पीसते हुए जवाब दिया—'इससे बढ़ कर और क्या कसूर हो सकता है माँ? यह कहती है कि दूध-दही, घी-मलाई सब अपने पीहर वालों को भेज देगी। भला, कहो तो इसे पीटने में क्या दोष है?'
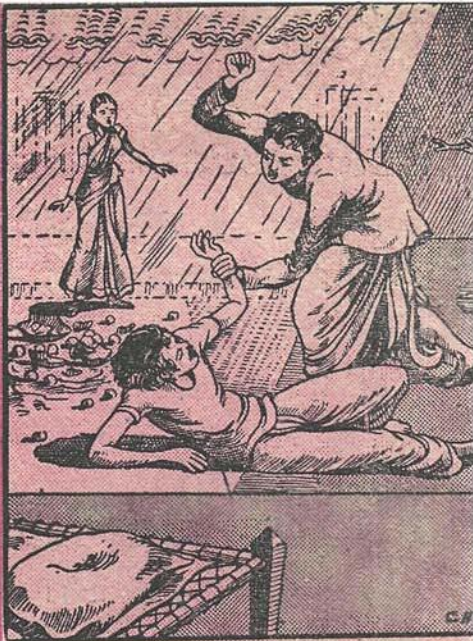
यह सुन कर किसी पड़ोसिन ने पूछा—'कामू! यह दूध-दही, घी-मलाई कहाँ से आई? तुम्हारे गाय-भैंस तो है नहीं?'

'अभी नहीं है तो क्या हुआ? मैं खरीदने जा रहा हूँ।' कामू ने जवाब दिया।

'कैसे खरीदेगा? तेरे पास रुपया कहाँ है?' पड़ोसिन ने पूछा।

'अभी रुपया नहीं है तो क्या हुआ? जब मैं नौकरी करने लगूँगा तो काफी रुपया

मिलने लगेगा। उस रुपए से चारा-भूसा खरीदूँगा और भैंसों को खिलाऊँगा।' कामू ने बेधड़क जवाब दिया।

यह सुन कर पड़ोसिन ने दाँतों तले उँगली दबा ली। 'वाह! कैसा बुद्धिमान है लड़का!' उसने कहा।

लेकिन माँ तो आख़िर उसकी माँ ही थी? वह चुप न रह सकी। उसने क्रोध से कहा—'बुद्धिमान है, तभी तो साले के हाथ से मार खाई! औरत को तो मरद कभी कभी पीटेगा ही। लेकिन क्या किसी ने कभी सुना है कि साला आकर बहनोई को पीट जाए?'

यह सुन कर भीमू ने हँसते हुए कहा—'मैंने इसे इसलिए नहीं मारा कि इसने मेरी बहन को पीटा। मैंने तो इसे इसलिए मारा कि इसके मारे मेरी साग-भाजियों की सारी बाड़ी चौपट हो गई।'

'तुम्हारी बाड़ी! तुम्हारी बाड़ी चौपट हो भी गई तो तुम मेरे बेटे को क्यों मारोगे? असल में तुम्हारे घर में बाड़ी है कहाँ?' कामू की माँ ने पूछा।

'अभी मेरे घर में बाड़ी तो नहीं है। सच तो यह है कि हमारे गाँव की जमीन पर साग-भाजी के पौधे अच्छी तरह नहीं बढ़ते। इसीलिए मैं इस गाँव में आकर रहने वाला हूँ। तब मैं यहाँ एक घर लूँगा। बाड़ी लगाऊँगा। साग-भाजी के पौधे खूब लहलहाएँगे; तब उन पौधों को कामू की भैंसें आकर चर जाएँगी। यही सब सोच कर मैंने उसे पीट दिया।' भीमू ने जवाब दिया।

भीमू की बात सुन कर सब लोग खिलखिला कर हँसने लगे।

पुराने जमाने में हिरण्याक्ष नाम का एक दैत्य-राज रहता था। उसने घोर तप करके शिवजी को प्रसन्न किया और अनेकों वर पाए। लेकिन वर पाकर उसे बहुत घमण्ड हो गया और उसने लोगों को सताना शुरू किया। यहाँ तक कि कुछ ही दिनों में उसका नाम लेते ही तीनों लोकों के सभी तरह के जीव भय से थर-थर काँपने लगे। आख़िर उसने देवराज इन्द्र को स्वर्ग से मार भगाया और स्वयं उनके सिंहासन पर बैठ कर राज करने लगा।

तो भी शिवजी सब कुछ सह कर चुप रह गए। क्योंकि वह उन्हीं का भक्त था। लेकिन आख़िर जब उसने कैलास पर भी चढ़ाई कर दी तो उन्हें बहुत क्रोध आया और उन्होंने उसे शाप दिया—'रे हिरण्याक्ष! तू मेरा भक्त था। इसलिए अब तक मैं तेरी सारी करतूतें सहता रहा। लेकिन दिन दिन तेरा अत्याचार बढ़ता ही गया। इसलिए जा! मैं तुझे शाप देता हूँ। तू मृग-योनि में अपने परिवार-सहित जन्म लेकर जंगलों-पहाड़ों में भटकता फिर!'

यह सुनते ही दैत्य-राज थर-थर काँपते हुए शिवजी के पैरों पर गिर पड़ा और गिड़गिड़ा कर क्षमा माँगने लगा।

तब शिवजी को उस पर दया आ गई और उन्होंने कहा—'अब शाप तो टल नहीं सकता। हाँ, बारह बरस तक मृग-रूप में रहने के बाद तुम सभी एक व्याध के हाथों मरोगे। उस समय तुम्हें अपने पहले जन्म की याद आएगी और तुरन्त शाप से छूट जाओगे!' यह कह कर शिवजी अन्तर्धान हो गए। महादेव के शाप के कारण हिरण्याक्ष अपनी पत्नियों सहित हरिणों के रूप में पैदा हुआ और जङ्गलों में घूमने लगा।

ये हरिण जिस जङ्गल में घूमा करते थे उसी में हर रोज़ शिवजी का एक भक्त

शोभाकुमार
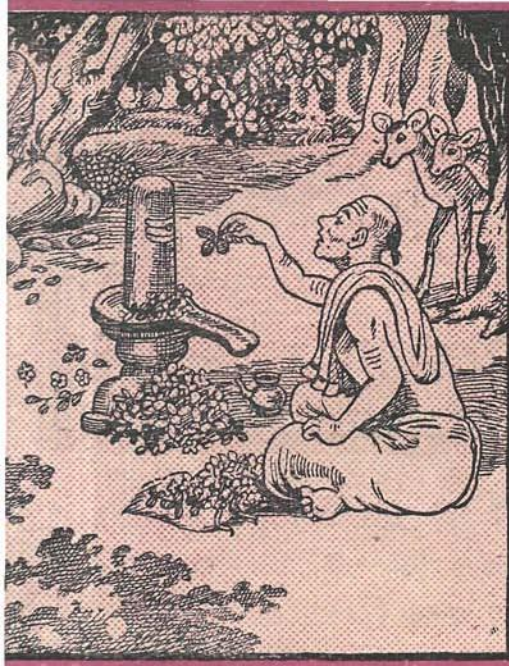
बिल्व-पत्र तोड़ने आया करता। वह पेड़ पर चढ़ कर एक एक पत्ता तोड़ता और एक एक बार शिवजी का नाम लेता। उसी पेड़ की जड़ में एक शिवलिंग भी था। वह बेल के कुछ पत्ते उस लिंग पर चढ़ा कर पूजा भी कर लेता।

हरिण भी शाप के कारण ही उस रूप में पैदा हुए थे न? इसलिए वे रोज़ वहाँ आकर उस शिव-भक्त की पूजा देखा करते। वे रोज़ सबेरे ही आकर उस लिंग के चारों ओर झाड़-बुहार कर साफ़ कर देते और भक्त के आने की राह देखते हुए खड़े रहते। इस तरह उस भक्त के साथ साथ वे हरिण भी शिवजी की सेवा करते रहे।

कुछ दिन बाद एक व्याध उसी जङ्गल में आकर रहने लगा। वह कोई मामूली व्याध न था। वह भी एक ब्राह्मण था जो अपने धर्म से भ्रष्ट हो कर किरातों में मिल गया था। उसने एक किरात-कन्या से विवाह भी कर लिया था और उन्हीं का पेशा अख़्तियार कर लिया था। वह दया-माया सब कुछ भुला कर जंगल में शिकार खेलता फिरता था।

जब वह शिव-भक्त बिल्व-पत्रों के लिए आता तो इस व्याध से उसका सामना हो जाता। उसको 'शिव! शिव!' कहते देख कर चिढ़ाने के लिए व्याध भी 'शिव! शिव!' कहना शुरू कर देता। वह इसी तरह चिढ़ा चिढ़ा कर आखिर हार कर वहाँ से चला जाता।

व्याध को रोज़ कोई न कोई शिकार मिल ही जाता था। लेकिन एक दिन संयोग से उसे एक भी शिकार न मिला। तब व्याध ने प्रण कर लिया कि बिना कोई न कोई शिकार मारे वह घर नहीं लौटेगा। इतने में अँधेरा हो गया। तब लाचार होकर वह व्याध नजदीक के एक पेड़ पर चढ़ कर बैठ

गया। इतने में उसे अचानक उस शिव-भक्त की याद आ गई। उसने अभ्यास-वश 'शिव! शिव!' कहना शुरू कर दिया और पेड़ पर का एक एक पत्ता नोच कर नीचे गिराने लगा। इतने में उसके भाग्य से एक हरिणी उस पेड़ के नीचे आकर खड़ी हो गई। व्याध ने तीर चढ़ा कर उसे मारना चाहा। तब उस हरिणी ने मनुष्य के से स्वर में कहा—'हे व्याध! पिछले जन्म में मैं एक राक्षस की पत्नी थी। शाप के मारे हम सब हरिणों के रूप में पैदा हुए। अभी मैं अपने पति को ढूँढ़ रही हूँ। इसलिए अभी तुम मुझे छोड़ दो। सबेरा होने के पहले ही मैं अपने पति से मिल कर, बिदा लेकर यहाँ लौट आऊँगी। तब तुम मुझे मारना।'

व्याध को उसकी बातें सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ। 'यह मामूली हरिणी नहीं है! नहीं तो मनुष्य की भाषा कैसे बोल सकती? अच्छा, इसे छोड़ दूँ; देखूँ, वह अपने वचन पर टिकती है कि नहीं?' यह सोच कर उसने उस हरिणी को जाने दिया!
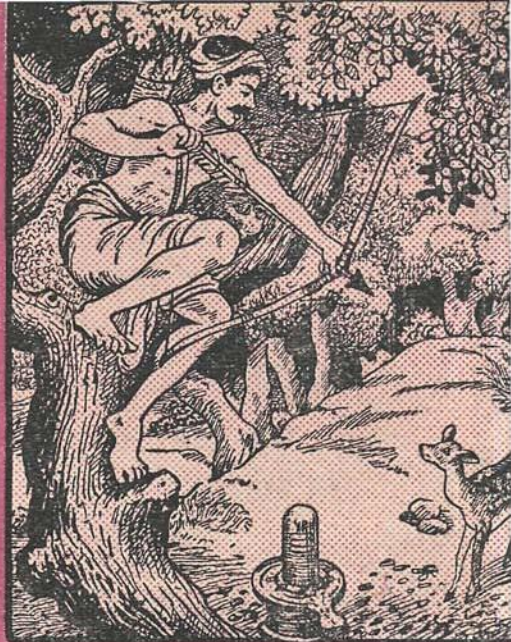
उसके जाने के थोड़ी देर बाद एक हरिण, उसका पति, उसे ढूँढ़ता आया। व्याध ने उसे भी मारना चाहा। लेकिन उसने भी हरिणी की ही तरह सबेरा होने के पहले ही लौट आने का वादा किया और चला गया। घर जाकर हरिणी ने एक बच्चे को जन्म दिया। तो भी सबेरा होने से पहले ही वह अपने पति और बच्चे के साथ लौट आई। आकर व्याध से कहा—'हे व्याध! देखो! हम अपने वादे के अनुसार आ गए। अब तुम हमें मार कर अपने पेट की आग बुझा लो!' उसकी ये बातें सुन कर व्याध के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

उसी समय हरिणों को अपने पहले जन्म की बातें याद आ गईं। उन्होंने आख़िरी बार पेड़ के नीचे झाड़-बुहार कर साफ किया। इसके बाद वे व्याध के तीर की राह देखते आँख मूँद कर खड़े हो गए। लेकिन उन्हें देख कर व्याध को भी पछतावा होने लगा। उसे अपने किए हुए सभी पाप याद आ गए। गरम गरम आँसू उसकी आँखों से टप-टप चूकर पेड़ की जड़ में शिव-लिंग को भिगोने लगे।

अँधेरे में वह व्याध जिस पेड़ पर चढ़ गया था वह बिल्व-वृक्ष था। अनजान में उसने जो पत्ते नोच कर नीचे गिराए वे सीधे पेड़ की जड़ में शिव-लिंग पर जा गिरे। उसने चाहे मजाक में ही क्यों न हो, शिव जी का नाम भी लिया था। उसके भाग्य से उस दिन शिवरात्रि का पुण्य-पर्व भी था। इसलिए उसे जागरण करने का फल भी मिला। उसके आँसू शिव-लिंग पर जा गिरे थे। इसलिए उसे अभिषेक करने का सौभाग्य मिल गया। इन सब कारणों से शिवजी उस पर प्रसन्न हुए। उन्होंने उस लिंग में से प्रत्यक्ष होकर व्याध को हरिणों के पूर्व-जन्म की कथा सुनाई। उनकी करुणा से व्याध के सभी पाप धुल गए और उसे भी मुक्ति मिल गई। उनके वर से वे हरिण आकाश में पहुँच कर तारों के रूप में प्रगट हुए और शाश्वत कांति से चमकने लगे। इसीलिए सत्ताईस नक्षत्रों में एक का नाम मृगशिग पड़ गया। इस तरह शिवजी की कृपा से दैत्य-राज का शाप टल गया और उसके सारे परिवार का नाम भी अमर हो गया।
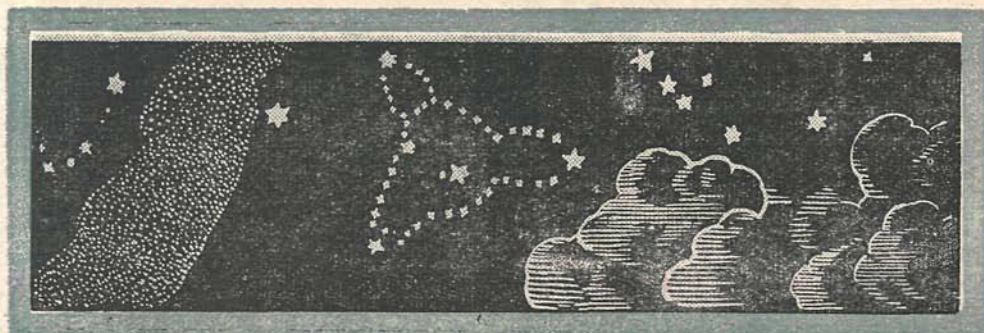
एक बार वेनिस और तुर्क वालों के बीच लड़ाई छिड़ी। उस जमाने में लड़ाई में जो दुश्मन जिंदा पकड़े जाते थे उन्हें गुलाम बना कर बेच देते थे। उसी आचार के अनुसार अहमद नाम का एक तुर्क-निवासी वेनिस वालों के हाथ पकड़ा जाकर गुलाम बनाया गया और फ्रांसिस्को नामक एक अमीर के हाथ बेच दिया गया।

फ्रांसिस्को के एक पाँच बरस का लड़का था। उस लड़के को धीरे धीरे अहमद से बहुत प्रेम हो गया और वह हमेशा उसी के पास रहने लगा। उस भोले-भाले लड़के में अहमद को भी अपना भगवान दिखाई दिया। दुश्मनों के उस मुल्क में वह मासूम बच्चा अहमद का एक-मात्र दोस्त बन गया।

उस लड़के ने कुछ ही दिनों में जान लिया कि अहमद हमेशा उदास रहा करता है। यह देख कर वह बहुत दुखी हुआ। इसलिए एक दिन उसने अपने पिता के पास जाकर कहा—' पिताजी! हमारे घर में जो एक गुलाम अहमद है, वह बहुत ही अच्छा आदमी है। लेकिन न जाने क्यों, वह हमेशा उदास रहा करता है। क्या आप उसकी उदासी दूर करने का कोई उपाय नहीं सोच सकते? पिताजी! आप उसका दुख दूर कीजिए न? मुझे भी इससे बहुत खुशी होगी!'

पहले फ्रांसिस्को ने उसकी बातों पर कोई ध्यान न दिया। लेकिन जब बच्चा बार बार गिड़गिड़ाने लगा तो उसने एक दिन अहमद को अपने पास बुलाया।

' मेरा लड़का कहता है कि एक गुलाम अहमद है, जो बहुत अच्छा आदमी है। क्या तुम्हीं वह अहमद हो?' उसने पूछा।
' हाँ, मैं ही वह अभागा अहमद हूँ, जो तीन साल से आपके घर गुलामी कर रहा है।

सोमेन्द्र वर्मा

वेनिस वालों का अन्याय नहीं है?' अहमद ने अफसोस के साथ पूछा।

'क्या तुम्हें मालूम है कि तुम्हारे तुर्किस्तान में हमारे वेनिस वाले कितने बंदी हैं?' फ्रांसिस्को ने पूछा।

'तो क्या इसके लिए मैं जिम्मेवार हूँ? तब तो वेनिस वालों के जुल्मों के लिए आपको जिम्मेवार बनना पड़ेगा। मैं आपसे सच सच बताता हूँ कि मैंने कभी किसी आदमी की स्वतन्त्रता छीनने में सहायता नहीं दी। मैंने आपके देश को लूट कर धनवान बनने की कभी कोशिश न की।' अहमद ने जवाब दिया। यों कहते कहते अचानक उसकी आँखों से आँसू की धार बहने लगी। उसने सिर झुका कर कहा—'भगवान दयालु है। उसकी जैसी इच्छा है वैसा ही होगा।'

अहमद को देख कर फ्रांसिस्को का दिल पिघल गया। तो भी उसने उसकी परीक्षा लेने के लिए कहा—'अहमद! मेरा एक काम है। अगर वह कर दो तो मैं तुम्हें गुलामी से छुड़ा दूँ। इस शहर में मेरा एक दुश्मन है। बताओ, क्या तुम उसका खून करोगे?'

इन तीन सालों में इस शत्रु-देश में इस लड़के के सिवा और किसी ने मेरी कोई ख़बर न ली! भगवान इस बच्चे की सर्वदा रक्षा करे!' अहमद ने कहा।

'अहमद! क्या मैं तुम्हारी कोई मदद कर सकता हूँ? बताओ! मैंने तुम्हें इसीलिए बुलाया है।' फ्रांसिस्को ने कहा।

'अपनी अमूल्य स्वतंत्रता खोकर, शत्रु-देश में गुलाम बन कर जीवन बिताने वाले मुझ अभागे की आप क्या मदद कर सकते हैं? मुझे अपनी हालत देख कर आप ही सोच होता है। क्या मुझे गुलाम बना रखना

यह सुनते ही अहमद ने क्रोधित हो कर कहा—'मुझे नहीं मालूम था कि आप इतने नीच हैं। नहीं तो मैं आपका मुँह देखना भी पसन्द न करता। इस दाम तो मैं अपने सारे देश की स्वतन्त्रता भी खरीदने को तैयार नहीं हूँ।' तब फ्रांसिस्को ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—'अहमद, मुझे तुम्हारा जवाब सुन कर बहुत खुशी हुई। आज से तुम मेरे सच्चे दोस्त गिने जाओगे। मैं सिर्फ तुम्हारी परीक्षा ले रहा था। मुझे यह कहते बड़ी खुशी हो रही है कि तुम परीक्षा में पूरी तरह पास हुए। वास्तव में मैंने पहले ही अपने लड़के के कहने से तुम्हारी मदद करने का इरादा कर लिया था। लेकिन तुम से मिल कर मैंने निश्चय कर लिया कि मुझे तुम्हारी मदद करनी ही होगी। जाओ, आज से तुम आजाद हो। मैं इस उपकार के बदले में तुम से कुछ नहीं चाहता। सिर्फ यह याद रखना कि मैं तुम्हारा मित्र हूँ।' उसकी बातें सुन कर अहमद फूला न समाया।
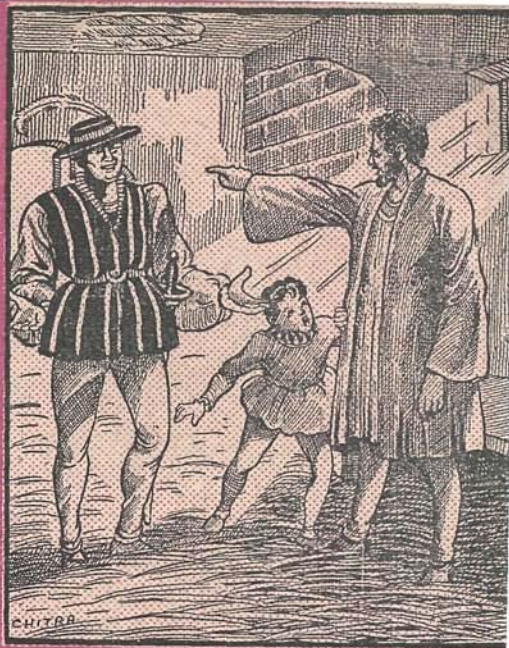
फ्रांसिस्को ने उसे तुर्किस्तान जाने वाले एक जहाज पर चढ़ा दिया और राह-खर्च के लिए कुछ रुपया भी दिया। जाते समय अहमद फ्रांसिस्को के लड़के को गोद में लेकर बड़ी देर तक आँसू बहाता रहा। उससे उस लड़के को छोड़ कर जाते न बनता था। क्योंकि वास्तव में वही उसे स्वतंत्रता दिलाने वाला था।

* * *

अहमद के स्वदेश चले जाने के छः महीने बाद एक रात को अचानक फ्रांसिस्को के घर में आग लग गई। उस समय सभी

गहरी नींद में डूबे हुए थे। लोगों के जगने तक लपटें फैल चुकीं थीं। अब वे इतनी विकराल हो गईं थीं कि किसी को घर में घुस कर सामान वग़ैरह उठा लाने का साहस न होता था। फ्रांसिस्को तो बाहर आ गया था। लेकिन बाहर आते ही उसे मालूम हुआ कि उसका लाड़ला इकलौता लड़का अंदर ही रह गया है। अब उसके शोक का ठिकाना न रहा। लड़के को बचाने के लिए उसने लपटों में कूदना चाहा। लेकिन लोगों ने उसे पकड़ कर रोक लिया। वह लाचार होकर चिल्लाने लगा—'हाय! कोई है ऐसा जो मेरे लाड़ले मुन्ने को बचाए? मैं उसे अपनी सारी जायदाद दे दूँगा।' धन के लोभ से बहुत लोगों ने उस जलते हुए घर में प्रवेश करने का प्रयत्न किया। लेकिन कोई सफल न हो सका।

इतने में एक आदमी दौड़ते हुए आकर सीधे लपटों में कूद पड़ा। चारों ओर धुँआ फैल रहा था। लपटों के मारे आसमान भी लाल दीखने लगा था। लोगों ने सोचा कि वह साहसी व्यक्ति आग में जल कर ख़ाक हो जाएगा। लेकिन उनके आश्चर्य का क्या कहना, जब दूसरे ही क्षण उन्होंने देखा कि वह आदमी अन्दर से बच्चे को चारों ओर से ढाँपे हुए गोदी में लेकर उठा ला रहा है। लोग खुशी के मारे चिल्लाने लगे। उसे बच्चे को सुरक्षित और सकुशल देख कर उनकी खुशी का ठिकाना न रहा। फ्रांसिस्को का तो कहना ही क्या? उसने अपने लड़के के प्राण-दाता की ओर कृतज्ञता भरी दृष्टि से देखा। उस व्यक्ति का सारा शरीर झुलस कर कालिख से भर गया था। इसलिए वह बिलकुल पहचाना भी न जा सकता था।

महात्मा ! लो, मैं अपनी सारी जायदाद तुम्हें देता हूँ। पहले यह थैली ले लो!' यह कह कर फ्रांसिस्को ने अशर्फ़ियों से भरी हुई एक थैली उसे देनी चाही। लेकिन उस आदमी ने लेने से साफ इन्कार कर दिया।

'मुझे ईनाम वग़ैरह कुछ नहीं चाहिए। मुझे जो कुछ मिलना था सो मैं पहले ही पा गया।' उसने कहा।

फ्रांसिस्को को ऐसा मालूम हुआ कि वह आवाज उसने पहले कहीं सुनी थी। उसने ग़ौर से देखा तो तुरन्त पहचान गया। 'अरे अहमद! तुम यहाँ?' यह कह कर उसने उसे गले से लगा लिया। छः महीने पहले ही आजाद हो कर स्वदेश लौटे हुए अहमद को फिर गुलाम के वेष में देख कर फ्रांसिस्को को बड़ा अचरज हुआ। 'तुम फिर यहाँ कैसे आए? अहमद!' उसने पूछा।

'यह सब भगवान की इच्छा है!' अहमद ने संक्षेप में जवाब दिया।

'सो तो है ही। लेकिन तुम यहाँ आए कैसे?' फ्रांसिस्को ने बड़ी उतावली के साथ पूछा।
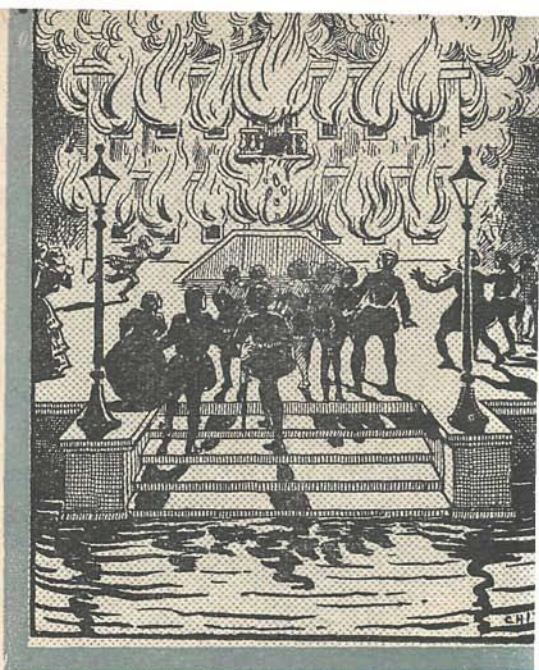
तब अहमद ने अपना किस्सा यों सुनाया—'आपने तरस खा कर मुझे आजाद करके भेज दिया था। मैं अपने भाग सराहता तुर्किस्तान जा पहुँचा। लेकिन स्वदेश की मिट्टी पर पाँव धरते ही मालूम हुआ कि मेरे बूढ़े पिता को वेनिस वालों ने गुलाम बना कर जहाज पर चढ़ा लिया है और उनका जहाज छूटने ही को है। मैंने तुरन्त दौड़े-दौड़े वहाँ जाकर जहाज के मालिक से कहा—'जनाब! मेरे पिता बहुत ही बूढ़े हैं। उनको गुलाम बनाने से आप को कोई लाभ नहीं।

मुझे देखिए! मैं जवान हूँ। हट्टा-कट्टा हूँ। मुझ में सेवा-टहल करने की ताकत है। इसलिए आप मेरे पिता को छोड़ दीजिए और उनके बदले मुझे ले जाइए!' यह कह कर मैंने अपने पास जो कुछ रुपया-पैसा था उन्हें दे दिया। बहुत देर तक गिड़गिड़ाने पर उन लोगों ने मेरे पिता को छोड़ कर मुझे गुलाम बना लिया। इस तरह मैं उसी जहाज पर अपने पिताजी की जगह सफर करता फिर इस शहर में आ पहुँचा। इस बार मैं राजी-खुशी गुलाम बन कर आपके नगर में आया हूँ। मेरे मन में बिलकुल रंज नहीं। मैंने सोचा कि भगवान ने मेरी भलाई के लिए ही यह सब कुछ किया है। मेरा सोचना ठीक ही निकला। इस बार गुलाम बन कर मैंने साबित कर दिया कि अहमद कृतघ्न नहीं है। उससे भी बढ़ कर मैं आपके लड़के की नन्हीं मासूम जान बचा कर आपके आनन्द का कारण बना।'

उसकी यह कहानी सुन कर वहाँ के सब लोग 'वाह! वाह!' करने लगे। उन सब के हृदय में गुलामों के प्रति सहानुभूति पैदा हो गई। बहुतों ने प्रण कर लिया कि वे जन्म भर गुलामी को मिटाने की कोशिश करेंगे। फ्रांसिस्को ने अहमद को बहुत समझाया कि तुम मेरी सारी जायदाद लेकर मेरे पास ही रह जाओ। लेकिन उसने न माना। आख़िर अहमद के त्याग का बदला चुकाने का कोई उपाय फ्रांसिस्को को न सूझा। तब उसने उसे फिर आजाद करा दिया। इतना ही नहीं, उसने यह घोषणा भी कर दी कि वह आगे से गुलामी के मिटाने में ही अपना तन, मन, धन लगा देगा।

अहमद कुछ दिन तक वहाँ रह कर फिर अपने देश को लौट गया।

लकड़हारा

['अशोक' बी. ए.]

नदी किनारे एक गाँव में
था रहता एक लकड़हारा।
था ग़रीब, लकड़ियाँ बेचकर
पेट पालता था बेचारा।

एक रोज़ वह नदी किनारे
जब कि लकड़ियाँ काट रहा था।
छूट कुल्हाड़ी गिरी नदी में,
ऊपर से वह झाँक रहा था।

फूट फूट कर रोता था वह
फिर मन ही मन पछताता था।
जहाँ कुल्हाड़ी गिरी, वहाँ पर
जल था बहुत, न जा पाता था।

वरुण-देव को दया आ गई,
बोले उससे—'क्यों रोते हो ?
बात कौन सी ऐसी मुश्किल
जिससे यों निराश होते हो ?'

कहा लकड़हारे ने तत्क्षण–
'हाय! नदी में गिरी कुल्हाड़ी!
और उसी के साथ-साथ ही
फूट गई तक़दीर हमारी।

बिना कुल्हाड़ी के हे भाई!
मैं तो भूखों मर जाऊँगा!
आप कुल्हाड़ी ला दें मेरी
मैं जीवन भर गुण गाऊँगा।'

सुनकर वरुण-देव ने जल में
डूब, कुल्हाड़ी एक निकाली!
बनी हुई थी जो चाँदी की
और न जो दिखती थी काली।

पूछा वरुण-देव ने उससे–
'बोलो क्या यही कुल्हाड़ी है ?'
कहा लकड़हारे ने तत्क्षण–
'यह मेरी नहीं तुम्हारी है।'

पुनः डूबकर वरुण-देव ने
तुरत कुल्हाड़ी एक निकाली!
जो सोने की बनी हुई थी
चमक-दमक थी खूब निराली।

बोले वरुण-देव—'हे भाई!
क्या सचमुच यही कुल्हाड़ी है ?'
कहा लकड़हारे ने—'भाई!
यह मेरी नहीं, तुम्हारी है।'

वरुण-देव इस बार डूबकर
लेकर आए वही कुल्हाड़ी!
लोहे की जो बनी हुई थी
बहुत दिनों की घिसी-पुरानी।

उसे देखते ही खुश होकर
कहा लकड़हारे ने—'मेरी!'
वरुण-देव भी बोले हँसकर—
'हाँ भाई! यह सचमुच तेरी!'

वरुण-देवता ने खुश होकर
सभी कुल्हाड़ी तब दे डालीं!
मिलीं लकड़हारे को तीनों
सोने, चाँदी, लोहे वाली।

'सचाई का फल मीठा है;'
बच्चो! इसे याद रखना तुम!
लोभ पाप का मूल, जान लो
कभी न लालच में पड़ना तुम!

आँखें

अब मैं बच्चों के एक एक अंग की देख-भाल के बारे में बताऊँगी। मनुष्य की इंद्रियों में आँखें सबसे नाजुक हैं। इसलिए आँखों के बारे में बहुत सावधान रहना चाहिए। लोग कहते हैं कि अन्धे के लिए सारा संसार सूना है। आँखों के बारे में लापरवाही करने का यह नतीजा होता है कि आज बीस पच्चीस बरस के नौजवान भी बूढ़ों की तरह चश्मे लगाए दिखाई देते हैं।

हरी चीज़ें देखने से आँखों को आराम मिलता है। इसलिए बच्चों को हरे पेड़, पौधे और नीला आकाश देखने का मौका देना चाहिए! बच्चे को तीखी रोशनी में नहीं रखना चाहिए। रोशनी उसकी आँखों पर कभी सीधी न पड़नी चाहिए। क्योंकि इससे आँखें चकाचौंध होकर खराब हो जाती हैं। बच्चों की ओर कभी टक लगा कर नहीं देखना चाहिए। क्योंकि तब बच्चा भी उसी तरह देखने लगेगा। कुछ लोग आँखें फाड़ कर नचाते हुए बच्चों को डराने की कोशिश करते हैं। यह बहुत बुरी बात है। जागते समय बच्चे का मुँह उस ओर न रहे जिधर से सूरज की रोशनी सीधी उस पर पड़ती हो। बहुत छोटी उम्र में ही बच्चों को अक्षराभ्यास नहीं कराना चाहिए। उन्हें छोटी हरूफ वाली किताबें पढ़ने को नहीं देनी चाहिए। जहाँ तक हो सके अक्षर बड़े होने चाहिए। कभी कभी बच्चे की पलकें फूलने लगती हैं या आँखें लग जाती हैं। खुराक में विटामिनों की कमी से भी ऐसा हो जाता है। तब तुरंत डाक्टर या वैद्य को दिखाना चाहिए। बड़े-बूढ़ों का कहना है कि काजल लगाना आँखों के लिए बहुत अच्छा है।

तुम्हारी दीदी

सङ्केत

बाएँ से दाएँ :

2. जमदग्नि का लड़का
7. पल
8. दण्ड
9. रुपयों का जोर
12. सहसा
15. तीव्र
16. श्रेष्ठ
17. गणपति
18. एक तरह का कपड़ा
20. जहाजों का समूह
22. पान का साथी
24. लकड़ियाँ काटने वाला

ऊपर से नीचे :

1. जुर्म
2. पंख
3. युद्ध
4. एक लीला
5. आनन्द
6. दिव्य
10. फल
11. वर्णन
13. एक अस्त्र
14. मृदुल
17. भेड़ चराने वाला
19. करीब
20. लता
21. पोस्ट
22. मूसा
23. निनाद
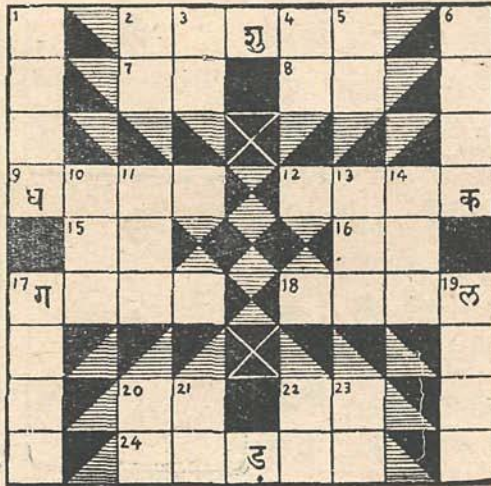
ताश की पत्तियों को कोरी बना देना !

जब इस तमाशे की बात सुनोगे तो पहले तुम कहोगे—'यह कैसे मुमकिन है?' लेकिन जब इसका गुर तुमको मालूम हो जाएगा तो चकित होकर कहोगे—'ओह! यह कितना आसान है?' पहले ताश की गड्डी में से चिडी, हुकुम, पान और ईंट की तिग्गियाँ निकाल लो। इनके अलावा एक पत्ती ऐसी भी ले लो जो बिलकुल कोरी हो। फिर चिडी, हुकुम और ईंट की तिग्गियों के नीचे का तीसरा बिन्दु और उसके कोने के अङ्क चाकू या किसी चीज़ से खरोच कर मिटा दो। यह काम जरा होशियारी से करो जिसमें पत्ती फटे नहीं। लेकिन चौथी (पान की) तिग्गी वैसी ही रहने दो। मैं जो कह रहा हूँ अगर वह तुम्हारी समझ में न आए तो बगल की तस्वीर देखो।

फिर इन चारों पत्तियों को पङ्खे की शक्ल में पकड़ लो जैसा कि बगल के पृष्ठ की पहली तस्वीर में दिखाया गया है। ऊपर पान की तिग्गी देख कर तमाशा देखने वाले
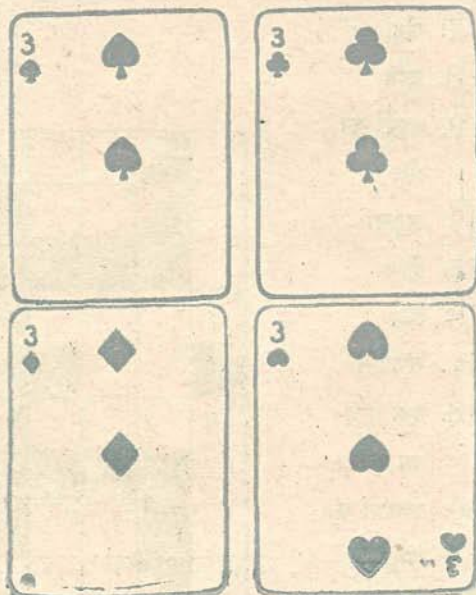
मान लेंगे कि नीचे की पत्तियाँ अन्य रंगों की तिग्गियाँ हैं। तब तुम उनसे कहोगे—'देखिए, मैं इन पत्तियों को कोरी बना दूँगा।'

यह कहते हुए तुम अपने पास की कोरी पत्ती को बाकी तीनों पत्तियों पर धर कर
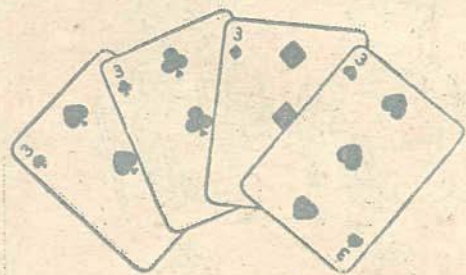
नीचे दिखाई हुई तरह पकड़ोगे। याने तुमने पत्तियों के जो हिस्से चाकू से खरोच कर कोरे बना दिए हैं वही ऊपर आ जाएँगे और अङ्कों वाले हिस्से ढक जाएँगे। सारा जादू इसी में है। इसके लिए जरा हाथ की
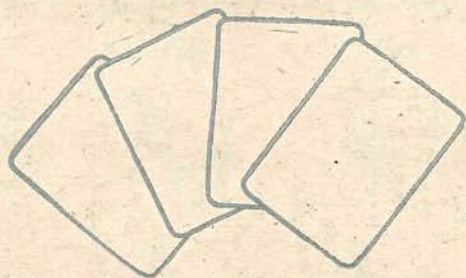
सफ़ाई और सावधानी चाहिए। पहले घर पर ही पत्तियाँ तैयार करके रख लेनी चाहिए।

[जो प्रोफेसर साहब से पत्र-व्यवहार करना चाहें वे उनको 'चन्दामामा' का उल्लेख करते हुए अंग्रेज़ी में लिखें।

प्रोफेसर पी. सी. सरकार, मेजीशियन
पो. बा. 7878 कलकत्ता 12]

मुछन्दरनाथ

[सरस्वतीकुमार 'दीपक']

*

चले मुछन्दर-नाथ
तीर्थ को चले मुछन्दर-नाथ।

गले में घण्टी, हाथ में माला,
कुर्ता पहना ढीला-ढाला
टोपा पहना काला-काला
बेत हाथ में लिया निराला

हिलाते इधर उधर को हाथ–
तीर्थ को चले मुछन्दर-नाथ।

बिल्ली का डर छोड़ चुके हैं
सबसे मुखड़ा मोड़ चुके हैं
दाँत भी अपने तोड़ चुके हैं
हरि से नाता जोड़ चुके हैं

नहीं कोई भी उनके साथ–
तीर्थ को चले मुछन्दर-नाथ।

राम-नाम में ध्यान लगाया
ऊँचा, लम्बा तिलक सजाया
पिछला सारा पाप भुलाया
तोड़ चुके दुनियाँ की माया

सुनाने सौ चूहों की बात–
तीर्थ को चले मुछन्दर-नाथ।

चुहेदान में उमर बिताई
चुरा चुरा कर रोटी खाई
आज मुछन्दर-नाथ गुसाईं
चले तीर्थ करने को भाई,

सुनेंगे, नहीं किसी की बात–
तीर्थ को चले मुछन्दर-नाथ।
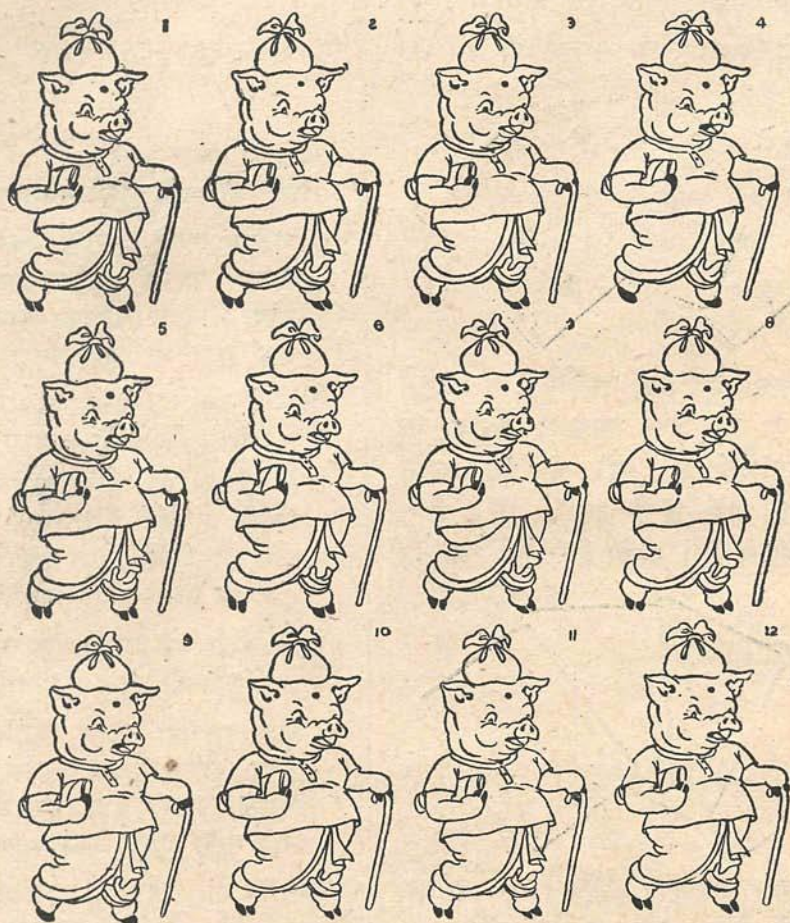
ऊपर के बारह चित्रों में सब एक से दिखाई देते हैं। लेकिन वास्तव में दो अलग हैं। बताओ तो देखें, वे दोनों कौन से हैं? अगर न बता सको तो जवाब के लिए ५४-वाँ पृष्ठ देखो!
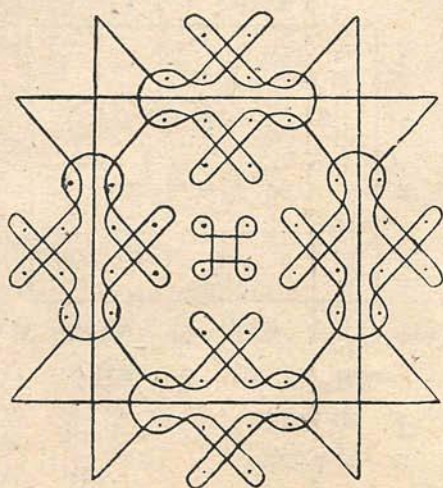
कुमारी रोहिणी
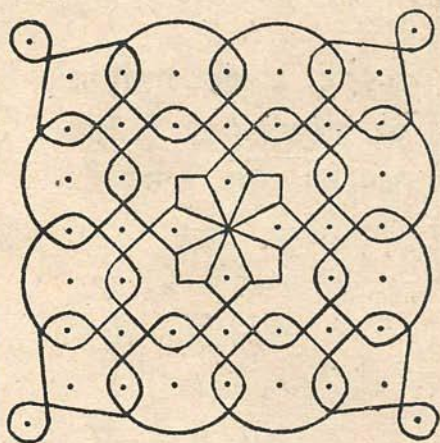
कुमारी लीला
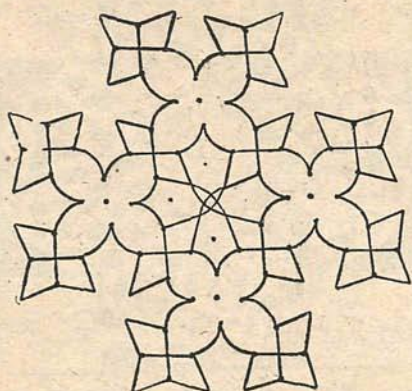
स्नेहप्यारी देवी
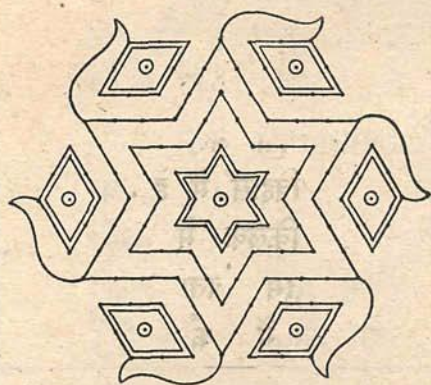
सुधा देवी

मैं कौन हूँ ?

★

मैं हिन्दी का पाँच अक्षरों का एक प्रसिद्ध संत कवि हूँ, जिसे आप सब लोग जानते हैं।

मेरा पहला अक्षर
कमल में है, पर
नलिन में नहीं।

मेरा दूसरा अक्षर
अबीर में है, पर
गुलाल में नहीं।

मेरा तीसरा अक्षर
सागर में है, पर
समुद्र में नहीं।

मेरा चौथा अक्षर
जुदा में है, पर
अलग में नहीं।

मेरा पाँचवाँ अक्षर
चिहास में है, पर
किलक में नहीं।

क्या तुम बता सकते हो कि मैं कौन हूँ ?

अगर न बता सको तो जवाब ५६-वें पृष्ठ में देखो।

विनोद-वर्ग

१	च	ल			
२		च	ल		
३			च	ल	
४				च	ल

निम्न-लिखित संकेतों की सहायता से इस वर्ग को पूरा करो:

१. चलने वाला
२. पर्वत-शिखर
३. चरित्र
४. हरा आँचल

अगर पूरा न कर सको तो जवाब ५६-वें पृष्ठ में देखो।
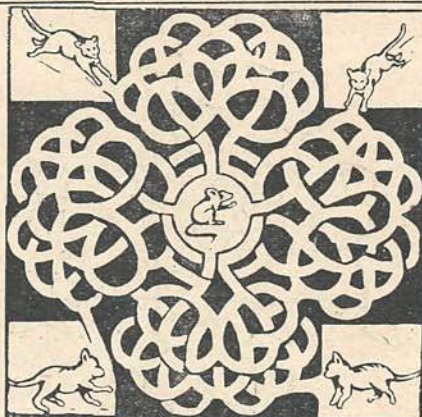
इस वर्ग के बीचों-बीच चार बिल्लियाँ हैं। लेकिन उनमें एक ही चूहे को पकड़ सकती है। बताओ वह कौन सी है ?

जन्म का वर्ष और मास बता देना !

अगर मैं तुम्हारे बताए बिना जान लूँ कि तुम किस साल, किस महीने में पैदा हुए थे तो यह सचमुच अचरज की बात होगी न? लेकिन मैं आसानी से ऐसा कर सकता हूँ। क्या मैं तुम्हें इसका रहस्य बता दूँ? लो सुनो—

पहले तुम जिस महीने में पैदा हुए थे उसकी संख्या मन में याद कर लो। उस संख्या को दो से गुणा करो। उसमें पाँच मिलाओ। फिर उस संख्या को पचास से गुणा करो। जो फल होगा उसमें अपने जन्म के वर्ष की संख्या मिलाओ। सबसे जो आख़िरी संख्या है उसमें से ३६५ निकाल दो। जो बच रहेगा उसमें ११५ मिलाओ। जो फल होगा वह मुझे बता दो।

जैसे समझ लो कि तुम अगस्त १९३४ में पैदा हुए हो।

महीने की संख्या	८
दो से गुणा करने पर . . .	१६
पाँच मिलाने से	२१
पचास से गुणा करने से . . .	१०५०
उसमें जन्म के वर्ष की संख्या मिलाने से	२९८४
इसमें से ३६५ निकाल देने से बचा .	२६१९
उसमें ११५ मिलाने से . .	२७३४

इनमें से आख़िरी दो अंक जन्म का वर्ष बताते हैं। बाकी दोनों अंकों में से सदी के अंक निकाल देने पर जन्म के मास का नंबर बच रहेगा। जैसे २७ में से १९ निकाल देने से ८ बच रहेगा। क्या अब तुम इसका रहस्य समझ गए?

*
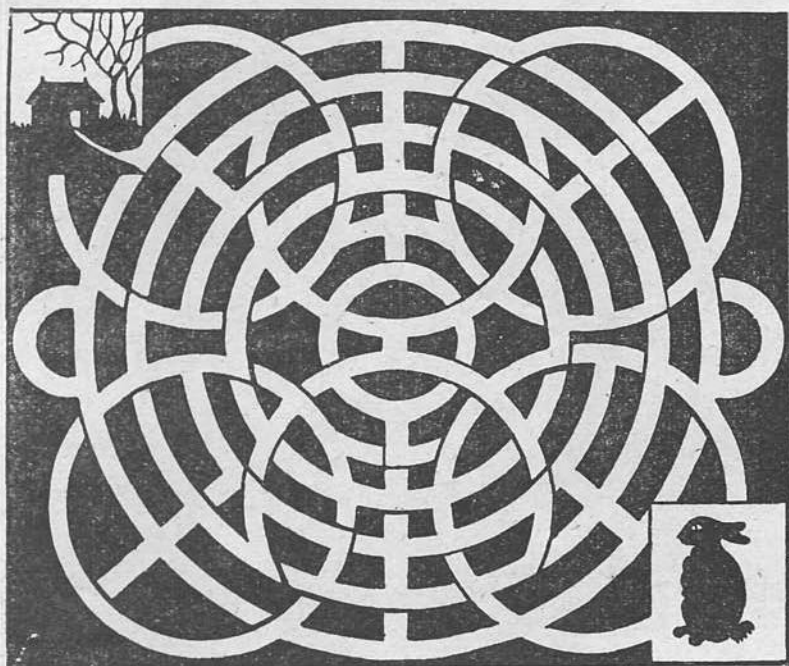
यह खरगोश घर से चल कर बहुत दूर आ निकला है और घर का रास्ता भूल गया है। अगर आप रास्ता जानते हो तो खरगोश को उसके घर तक छोड़ आइये।

५०-वें पृष्ठ की बारह चित्रों वाली पहेली का जवाब : चार और नौ नंबर वाले दोनों चित्र अलग हैं।
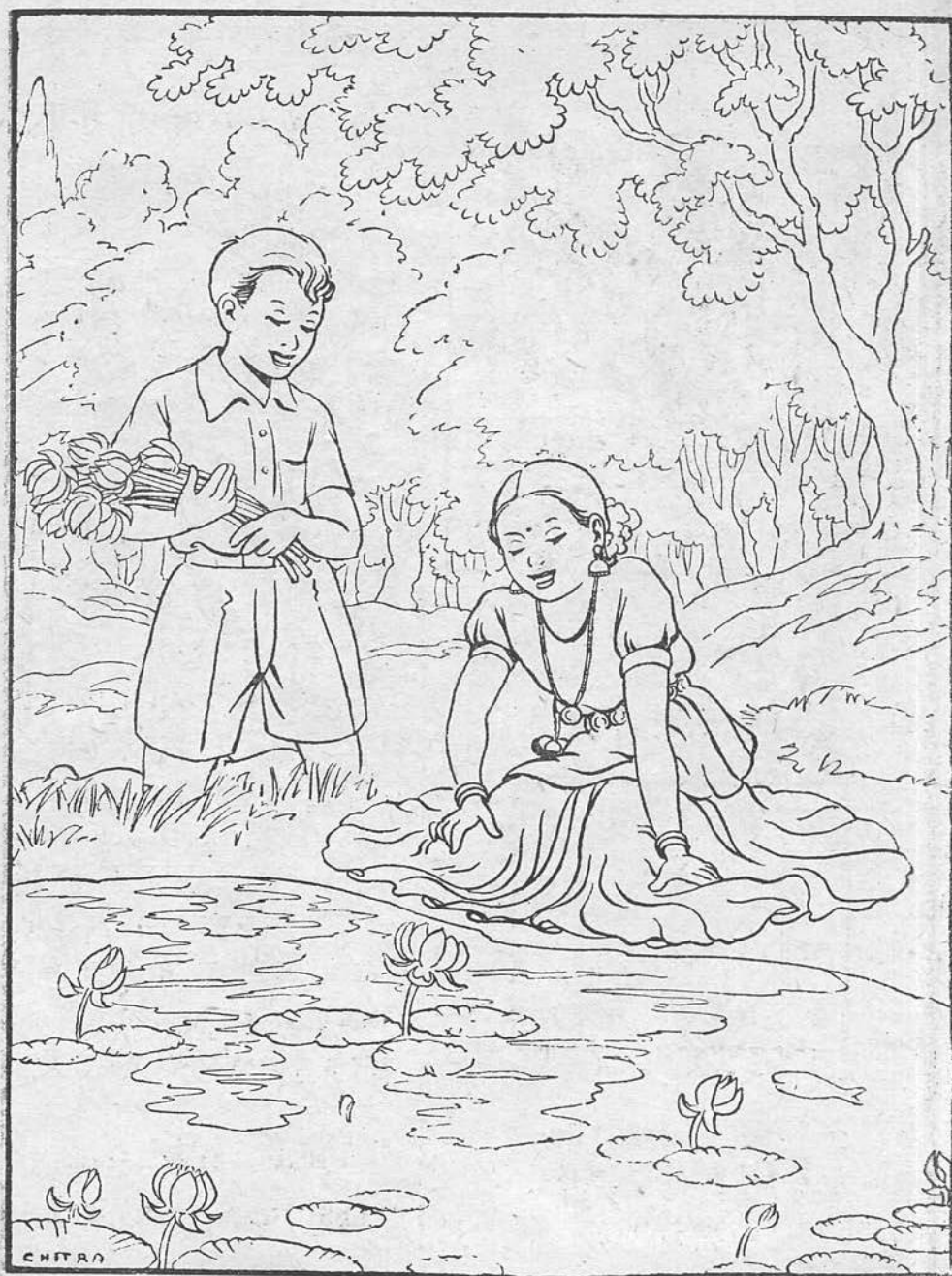
इस तस्वीर को रंग कर अपने पास रख लेना और अगले महीने के चन्दामामा के पिछले कवर पर के चित्र से उसका मिलान करके देख लेना।

चन्दामामा पहेली का जवाब :

विनोद-वर्ग का जवाब :

च	ल	न	शी	ल
अ	च	ल	शृ	ङ्ग
चा	ल	च	ल	न
ह	रि	तां	च	ल

'मैं कौन हूँ' का जवाब :

कबीरदास

सभी धार हैं !

मगर एक अक्षर बदलने से हर एक का माने बदल जाएगा !

*

धार के पहले एक अक्षर रख कर पढ़ोगे तो नीचे दिए हुए अर्थ-वाले शब्द निकल आएँगे। अगर तुम से न हो सके तो जवाब के लिए अन्त में उलट कर देखो।

— धार = . दूध देने वाली

— धार = ... कर्ज

— धार = . . बेहतर बना

— धार = ... जाना

— धार = ... आना

— धार = ... सबूत

— धार = . सबूत के साथ

भूल-सुधार :—

पिछले महीने के नौ चित्रों का जवाब ग़लत छपा था। वास्तव में 3 और 5 नंबर वाले चित्र एक से थे।

दुधार; उधार; सुधार; सिधार

पधार; आधार; साधार।

Controlling Editor : SRI CHAKRAPANI

Printed and Published by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press, Madras.

Photo by B. Ranganatham

मेरा मित्र

CHANDAMAMA (Hindi) SEPT. 1950 Regd. No. M. 5452

और मुझे ....?